सूची

डा० राजेन्द्रप्रसाद प्रध्यक्ष संविधान सभा

प्राक्कथन

यह पुस्तिका भारत के संविधान के विषय में है। इसमें संविधान के मुख्य मुख्य विषय लोकप्रिय परन्तु ठीक ठीक रूप में संक्षेप से लिखे गये हैं।

निःसन्देह विशिष्ट विषयों का अधिकृत ज्ञान प्राप्त करने के लिये तो संविधान के अनुच्छेद ही देखने पड़ेंगे, परन्तु इस पुस्तिका से उसका पूरा और विशद परिचय अवश्य मिल सकेगा।

मुझे जनता से इसका परिचय कराते हुए बहुत खुशी है।

परिचय

संविधान सभा का विकास

जन निर्वाचित संविधान सभा का विचार पहले पहल सन् १९२२ में महात्मा गांधी के दिमाग में आया था। उन्होंने लिखा था, "स्वराज्य ब्रिटिश पार्लियामेण्ट द्वारा बिना मूल्य दिया हुआ उपहार नहीं होगा, यह भारत के पूर्ण आत्मप्रकाशन की घोषणा होगा। यह ठीक है कि इसका प्रकाशन पार्लियामेण्ट के एक अधिनियम द्वारा होगा, परन्तु वह भारत की घोषित अभिलाषा की शिष्ट स्वीकृति मात्र होगा, जैसा कि दक्षिण अफ्रीकन संघ के मामले में हुआ था।" तथापि १९३५ से पूर्व तक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इस विचार को गम्भीरतापूर्वक और अधिकृत रूप में नहीं अपनाया था। जनवरी १९३८ में पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने लिखा था "राष्ट्रीय कांग्रेस का लक्ष्य स्वतन्त्रता और लोकतन्त्रात्मक

राज्य की स्थापना है। उसकी मांग है कि स्वतन्त्र भारत का संविधान, बिना किसी बाह्य हस्तक्षेप के वयस्क (बालिग) मताधिकार के आधार पर निर्वाचित संविधान सभा द्वारा बनाया जाये। लोकतन्त्र का मार्ग यही है, और क्रान्ति के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नही जिससे आवश्यक परिणाम निकल सके। इस प्रकार निर्वाचित सभा समस्त जनता की प्रतिनिधि होगी, और उसकी रुचि छोटे-छोटे समूहों को प्रभावित करने वाले तुच्छ साम्प्रदायिक प्रश्नो की अपेक्षा, सर्वसाधारण की आर्थिक और सामाजिक समस्याओं मे अधिक होगी। इस प्रकार यह बिना विशेष कठिनाई के साम्प्रदायिक तथा इसी प्रकार की अन्य समस्याओं को हल कर लेगी।"

द्वितीय विश्व युद्ध तक ब्रिटिश सरकार भारत की संविधान सभा की मांग का विरोध करती रही। परन्तु युद्ध ने और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति ने ऐसी अवस्थायें उत्पन्न कर दी कि उनके कारण चर्चिल सरकार तक की आंखें खुल गयी। क्रिप्स योजना मे युद्ध की समाप्ति के तुरन्त पश्चात् देश का नया संविधान बनाने के लिये एक संगठन स्थापित करने की बात कही गयी थी। परन्तु यह योजना फलीभूत नही हुई। १५ मार्च १९४६ को मजदूर दल के प्रधानमन्त्री मि० एटली ने हाउस आफ कामन्स में घोषणा की, "भारत ४० करोड़ व्यक्तियों का राष्ट्र है, वह दो बार अपनी सन्तानों को स्वतन्त्रता पर मर मिटने के लिये भेज चुका है। वह यदि अपने भविष्य का निर्माण स्वयं करने की स्वतन्त्रता का दावा करता है, तो इस में आश्चर्य की क्या बात है? वर्तमान शासन के स्थान पर कौन सी शासन प्रणाली प्रतिष्ठित की जाय, यह निर्णय करना भारत का काम है, परन्तु हमारी इच्छा है कि इस निर्णय पर पहुंचने के लिये तुरन्त ही आवश्यक व्यवस्था करने में हम भारत के सहायक हों।"

बन्धनों के साथ जन्म

इस घोषणा के परिणामस्वरूप १९४६ में कैबिनेट मिशन योजना

के अनुसार संविधान सभा की स्थापना हुई । यह संगठन सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न नहीं था; इसका जन्म ही आधारभूत सिद्धान्तों और कार्यप्रणाली दोनों दृष्टियों से अनेक बन्धनों के साथ हुआ था । इसके अतिरिक्त इसके निर्णयों पर ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की अन्तिम छाप लगनी थी ।

इन प्रतिकूल अवस्थाओ के बावजूद कांग्रेस ने संविधान सभा में योग देना स्वीकार कर लिया । इसके विपरीत मुस्लिम लीग ने उस में भाग लेने से इन्कार कर दिया, यद्यपि ६ दिसम्बर के वक्तव्य में लीग जो कुछ चाहती थी, व्यवहारतः वह सब दिया जा चुका था । वह अपने पहले के हठ पर अड़ी रही, जिसके अनुसार उसने कहा था कि मुस्लिम जाति किसी एक ही संविधान निर्मात्री व्यवस्था में बिल्कुल भाग नहीं लेगी । वह पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के लिये दो पृथक् संविधान सभाओं की मांग करती थी ।

यह गतिरोध ३ जून की योजना तक चलता रहा, जिसमें देश के विभाजन की बात कही गयी थी ।

सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न संविधान सभा

भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम ने कैबिनेट मिशन योजना को त्याग कर संविधान सभा को सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न कर दिया । १४ अगस्त १९४७ को इसकी एक और बैठक भारत सरकार के अधिकार को अपने हाथ में लेन के लिये हुई ।

संविधान की रचना

भारत की सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न संविधान सभा के प्रथम अधिवेशन में इसके अध्यक्ष डा० राजेन्द्रप्रसाद ने भारत में वर्गहीन समाज संगठित करने की बात कही । यह एक ऐसा राज्यमण्डल बनने जा रहा था जिसका आधार सहकारिता पर था । इसी के संविधान की रचना सभा का मुख्य

कार्य था। इस सांविधानिक प्रासाद की आधारशिला उस 'उद्देश्य प्रस्ताव' द्वारा रखी गयी थी जिसे पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने उपस्थित किया था। उस में कहा गया था:

जिसमें सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न स्वतन्त्र भारत की और इसके निर्माता भागों की तथा इसके शासन के अंगों की शक्ति और अधिकार, जनता से प्राप्त होंगे; और

जिसमें भारत के सब लोगों के लिये, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय की; प्रतिष्ठा तथा अवसर की और विधि (कानून) की दृष्टि में समानता की; विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म, उपासना, आजीविका और काम की स्वतन्त्रता की; विधि (कानून) तथा सार्वजनिक सदाचार के अधीन रहते हुये, गारण्टी और निश्चित प्राप्ति करायी जायगी; और

जिसम अल्पसंख्यकों, अनुन्नत जन-जातियों के (कबायली) क्षेत्रों और दलित तथा अन्य अनुन्नत वर्गों के लिये पर्याप्त परित्राण (संरक्षण) की व्यवस्था की जायगी; और

जिसमें लोकतन्त्र के प्रादेशिक क्षेत्र की एकता की, और भूमि, समुद्र तथा वायु में इसके सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न अधिकारों की, न्याय और सभ्य राष्ट्रों के कानून के अनुसार, रक्षा की जायगी, और यह प्राचीन देश संसार में अपना अधिकारपूर्ण तथा सम्मानित स्थान प्राप्त करता हुआ, संसार में शांति, वृद्धि तथा मानव कल्याण की उन्नति में स्वेच्छया अपना भाग प्रदान करेगा।

विविध समितियों के प्रतिवेदनों (रिपोर्टों) ने सांविधानिक प्रासाद के लिये ईंट और चूने का काम दिया था। ये समितियां थीं:—संघ शक्ति

संविधान के उद्देश्य

अपने सब नागरिकों के लिये इन बातों को

सुरक्षित करना :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय** ।

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और

उपासना की **स्वतंत्रता** ।

प्रतिष्ठा और अवसर की **समानता** प्राप्त

कराना, और उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता

सुनिश्चित् करने वाली **बन्धुता** बढ़ाना ।

मूल अधिकार

१. व्यावहारिक और सामाजिक समता

२. अस्पृश्यता का अन्त

३. अवसर की समता

४. वैयक्तिक स्वतन्त्रता जिसमें वाक्स्वातन्त्र्य और सम्मेलन स्वातन्त्र्य तथा वृत्ति स्वातन्त्र्य आदि आते हैं

५. विधि का शासन

६. प्राण और स्वतन्त्रता की रक्षा तथा विधि के समक्ष समानता

७. धर्म को मानने, आचरण करने और प्रचार करने की स्वतन्त्रता

८. संस्कृति और शिक्षा के अधिकार

९. सम्पत्ति का स्वामित्व

१०. सांविधानिक उपचारों की समता

समिति, संघ संविधान समिति, प्रान्तिक संविधान समिति, अल्पसंख्यक वर्ग तथा मौलिक अधिकार मन्त्रणा समिति, मुख्य आयुक्तों (कमिश्नरों) और संघ तथा राज्यों में वित्तीय (आर्थिक) सम्बन्धों की समितियां, और जन-जाति क्षेत्र मन्त्रणा समिति (ट्राइबल एरिया एडवाइज़री कमेटी)। परन्तु उसके अन्तिम रूप और आकार पर निश्चय लेखन समिति (ड्राफ्टिंग कमेटी) ने किया था, जिसके सभापति डा० अम्बेडकर थे। संविधान के लेखन मे आठ मास तक श्रम करना पड़ा, और उसके पश्चात् उस पर संविधान सभा ने खण्डशः (क्लाज़ बाइ क्लाज़) विचार करके और उस पर जो आलोचनायें हुई, उनको ध्यान में रख कर, उसमें संशोधन कर दिये।

२६ नवम्बर १९४९ को संविधान सभा ने भारत की जनता की ओर से संविधान को, जो कि आज स्वतन्त्रता का अधिकारपत्र है, अंगीकृत और अधिनियमित कर दिया (कानून के रूप में पास कर दिया)। इस प्रकार दो वर्ष ग्यारह मास और अठारह दिन के पश्चात् जो संविधान तैयार हुआ, उसमें ३७५ अनुच्छेद (धारायें) और आठ सूचियां (शिड्यूल) हैं।

राष्ट्रीय ध्वज

संविधान सभा ने राष्ट्र को उसका राष्ट्रीय ध्वज और चिन्ह भी प्रदान किये हैं। २२ जुलाई १९४७ की सभा ने अशोक चक्रांकित तिरंगे को भारत का ध्वज अंगीकृत कर लिया। यह ध्वज जैसा कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, "किसी साम्राज्य का या साम्राज्यवाद का ध्वज नहीं, अपितु स्वतन्त्रता का ध्वज है; केवल हमारे लिये ही नहीं, अपितु जो भी इसे देखें, उन सभी की स्वतन्त्रता का यह प्रतीक है।"

यह भी भारतीय परम्परा के अनुकूल ही हुआ कि स्वतन्त्रता का यह प्रतीक संविधान सभा को भारतीय नारियों की ओर से श्रीमती हंसा मेहता ने भेंट किया।

कुछ मुख्य बातें

एक विशद लेख्य

भारत का संविधान एक विशद लेख्य (डाक्यूमेण्ट) है। यह एक शिशु राष्ट्र की आरम्भिक कठिनाइयों को हल करने के लिये विस्तृत उपबन्ध या व्यवस्था करता है। ये उपबन्ध संविधान को निर्विघ्न रूप से कार्यान्वित करने में भी सहायक होंगे।

अन्य अनेक विषयों के अतिरिक्त संविधान में निम्न विषयों की भी चर्चा है :

१. शासन का ढांचा, २. विविध अंगों के काम और परस्पर सम्बन्ध, ३. नागरिकता, ४. मूल अधिकार, ५. राज्य की नीति के निर्देशक तत्व या सिद्धान्त, ६. नौकरियां, ७. फेडरल न्यायपालिका और उच्च न्यायालय

ज़ुडिशिअरी और हाईकोर्ट), ८. राजभाषा और ९. मौलिक महत्व
अन्य अनेक विषय ।

उद्गम स्थल

संविधान के निर्माताओं ने लोकतान्त्रिक देशों के परिपक्व अनुभवों बुद्धिमत्तापूर्वक लाभ उठाया है। उन्होंने अन्य संविधानों की त्रुटियों बचने का यत्न किया है और उनके केवल ऐसे अंगों को अपनाया है । भारतीय अवस्थाओं के अनुकूल हैं। प्रचलित आचारों और विचारों । कहीं कहीं सर्वथा परित्याग करके उन्होंने ऐसे उपबन्ध या व्यवस्थायें गीकृत की हैं, जो मौलिक होने के अतिरिक्त शान्ति तथा युद्धकाल में ते लचीला बना कर कानूनीपन से बचकर चलने में भी सहायक होंगी। नके सिवा, उन्होंने प्राचीन भारत की बचीखुची लोकतान्त्रिक संस्थाओं सर्वाधिक मूल्यवान पंचायतों को देश के सांविधानिक ढांचे में स्थान कर अपने संविधान का स्वरूप राष्ट्रीय बना दिया है।

जनता की प्रभुता

संविधान ने जनता में प्रभुत्व न्यस्त करने का और सांविधानिक ासन की स्थापना करने का यत्न किया है। वुडरो विल्सन ने लिखा है, सांविधानिक शासन वह है, जिसकी शक्तियां जनता के हितों के अनुकूल युक्त हों, और वैयक्तिक स्वतन्त्रता की रक्षा करें।"

उद्देश्य प्रस्ताव में असन्दिग्ध रूपेण कहा गया है कि सर्वोपरि प्रभुता, य तथा उसकी इकाइयों, दोनों क्षेत्रों में जनता में निहित रहेगी, और ा तत्व का उल्लेख संविधान की प्रस्तावना में भी कर दिया गया है, जिसके ब्द हैं, "हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न लोकत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर एतद् द्वारा इस विधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।"

आबादी

फ्रान्स

ब्रिटेन

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका

अफ्रीका

सोवियट संघ

भारत

हमारे मतदाता

(प्रत्येक वृत्त मे एक करोड़ आबादी का बोध होता है)

जनता द्वारा शासन

संविधान का लक्ष्य लोकतन्त्रात्मक शासन है, और उसमें भारत की परिभाषा एक सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य के रूप में की गई है। दूसरे शब्दों में, भारत की शासन पद्धति ऐसी होगी, जिसमें औसत नागरिक की पहुंच अधिकार के स्रोत तक प्रत्यक्ष रूप से रहेगी। इस प्रकार राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के अधिकार का अर्थ न केवल मत देने और प्रतिनिधि चुनने का अधिकार है, अपितु पदाधिकारी बनने और उसके लिये चुने जाने का अधिकार भी है। वर्तमान भारत के इतिहास में संविधान ने यह अधिकार सब वयस्क (बालिग) व्यक्तियों को अर्थात् इक्कीस वर्ष की आयु के सब लोगों को प्रथम बार ही दिया है और जन्म, सम्पत्ति, रंग, जाति, अथवा लिंग के आधार पर सब भेदभावों को मिटा दिया है। उदाहरणार्थ, संविधान ने कलम की एक ही हरकत से भारतीय रैयतों का, जो जनता का सत्तर प्रतिशत है, दर्जा बिलकुल बदल दिया है। संसद्मूलक (पार्लियामेंट) शासन पद्धति और वयस्क मताधिकार द्वारा सरकार जनता और उसके प्रतिनिधियों के प्रति उत्तरदायी हो जाती है।

धर्मनिरपेक्ष राज्य

भारत में विविध सम्प्रदायों के विद्यमान होते हुये भी, संविधान साम्प्रदायिक राज्य का विरोधी है, और भारत के लिये धर्मनिरपेक्ष राज्य की कल्पना करता है। धर्म, जाति रंग, विश्वास या लिंग के किसी भेदभाव के बिना सब के लिये एक सामान्य नागरिकता का निश्चय किया गया है। इस प्रकार राज्य की ओर से जो सेवायें होंगी, वे सब नागरिकों में समान रूप से विभाजित होंगी। भारत का प्रत्येक नागरिक अपने मनपसन्द धर्म पर आचरण करने में स्वतन्त्र रहेगा। सरकार धार्मिक आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं बरतेगी, और न किसी विशेष मत के साथ पक्षपात करेगी या किसी मतविशेष का प्रचार करेगी। इस आदर्श का आधार

यह विचार है कि धर्मनिरपेक्ष राज्य का काम केवल मनुष्य और मनुष्य के सम्बन्धों को नियन्त्रित करना है, मनुष्य और परमेश्वर के सम्बन्धों को नहीं। राज्य अन्य मनुष्यों के ही साथ किसी व्यक्ति के व्यवहार का नियन्त्रण करेगा।

संघीय ढांचा

भारतीय संविधान का ढांचा संघीय है। इसके दो क्षेत्र हैं—संघ और उसके अंगीभूत एकक (इकाइयां) राज्य। दोनों के अधिकार क्षेत्रों का उल्लेख संविधान में स्पष्टतापूर्वक कर दिया गया है। एक स्वतन्त्र न्याय-पालिका (जुडिशिअरी) की व्यवस्था है, जो संविधान की व्याख्या और केन्द्र तथा राज्यों के बीच उठने वाले विवादों का निर्णय करेगी। परन्तु अमेरिका के समान यह "फेडरल" संघ नहीं है, जिसमें एककों की स्व-तन्त्रता और पृथकता का ध्यान रखा गया है। भारतीय संविधान अवशिष्ट अधिकार (रेजिड्युरी अथारिटी) केन्द्र में निहित करता है, जो विषय समवर्ती (कानकरेन्ट) अथवा राज्य सूचियों में परिगणित नहीं किये गये थे, वे सब संघ सूची में समाविष्ट माने जायेंगे। यह संघ को पर्याप्त परिमाण में यह शक्ति भी देता है कि वह सब महत्वपूर्ण कार्यों को सर्वत्र एक सी योजना के अनुसार करावे। एक न्यायपालिका (जुडिशिअरी), मौलिक विधियों (आधारभूत कानूनों) की एकता, अखिल भारतीय नौकरियों की सामान्यता और एक सामान्य भाषा द्वारा शासन में एकता स्थापित करने का यत्न किया गया है।

परन्तु भारतीय संघ लचकदार है। आपात (संकटकालीन) अवस्था में केन्द्र, राज्यों का प्राधिकार (अथारिटी) अपने हाथ में ले सकता है।

इसका लचीलापन

किसी भी अच्छे संविधान को लचीला, परिस्थितियों के अनुसार

परिवर्तनयोग्य और संशोधन की नियमित प्रक्रिया में से गुजरे विना घटनाओं का सामना करने में समर्थ होना चाहिये। भारतीय संविधान में ये सब गुण हैं। संविधान सभा ने संविधान पर अन्तिम अथवा त्रुटिहीन होने की छाप नहीं लगाई। उसने जनमत संग्रह और अभिसमय (कन्वेन्शन या विशेष सम्मेलन) की उलझनकारी प्रक्रिया को छोड़ दिया है। अमेरिकन और आस्ट्रेलियन संविधानों की उलझनों से भी बचा गया है। उनके स्थान पर इस में संशोधन की सरल प्रक्रिया अपनाई गई है।

भारतीय संविधान में सांविधानिक उपबन्धों (व्यवस्थाओं) को तीन श्रेणियों में बांटा गया है। प्रथम में (१) केन्द्र की तथा राज्यों की न्यायपालिका (जुडिशिअरी), (२) संघ की कार्यपालिका (एग्जेक्यूटिव) के प्राधिकार (अथारिटी) की सीमा, (३) संघ और राज्यों के सम्बन्ध, (४) संघ, राज्य और समवर्ती (कानकरेन्ट) सूचियां, (५) संसद (पार्लियामेण्ट) में राज्यों के प्रतिनिधि, और (६) राष्ट्रपति का निर्वाचन संबंधी अनुच्छेद (धारायें) सम्मिलित हैं। शेप अधिकतर उपबन्ध द्वितीय श्रेणी में हैं। इनसे सम्बद्ध मामलों में यदि संशोधन का कोई विधेयक (बिल) प्रत्येक सदन (हाउस) में पेश होकर उस सदन के सब सदस्यों के बहुमत द्वारा और उस सदन में उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्यों के दो तिहाई से अन्यून बहुमत द्वारा पारित (पास) हो जाय, तो संविधान को संशोधित हुआ माना जायगा। प्रथम श्रेणी से सम्बद्ध मामलों में, संशोधन की प्रथम अनुसूची (शिड्यूल) के भाग (क) और (ख) में उल्लिखित राज्यों में कम से कम आधों के विधानमण्डलों (लेजिस्लेच्युअर) द्वारा अनुसमर्थित (रैटीफाइड) होना आवश्यक है। जो उपबन्ध इन प्रक्रियाओं में नहीं आते, उनका संशोधन विधानमण्डल साधारण रीति से कर सकते हैं।

इस व्यवस्था से लचक और भी बढ़ जाती है कि संघीय ढांचा आपात काल में एककीय या एक केन्द्रयुक्त ढांचे में परिवर्तित किया जा सकता है।

केन्द्रीय शासन तव राष्ट्र के सब मामलों का नियन्त्रण अपने हाथ में ले सकता है। और उस अवस्था में केन्द्रीय विधानमण्डल (लेजिस्लेच्युअर) ही साधारणतया केवल राज्यों में निहित विधायिनी शक्ति अर्थात् कानून बनाने के अधिकारों का प्रयोग कर सकता है। शान्ति काल में भी संसद् या पार्लियामेण्ट इन में से किसी विषय पर कानून बना सकती है, परन्तु वह विषय पहले राष्ट्रीय महत्व का घोषित किया जाना चाहिये और वह दो तिहाई के बहुमत से अंगीकृत होना चाहिये। जिन पर संघ और राज्य दोनों कानून बना सकें ऐसे विषयों की लम्बी सूची अंगीकृत करने से न केवल संविधान लचकदार बन गया, अपितु अनावश्यक कानूनीपन से भी बचाव हो गया है, जो संघ प्रथा का अभिशाप है।

राजभाषा

राजभाषा सम्बन्धी उपबन्ध नवीन संविधान की एक और महत्वपूर्ण विशेषता है। भारत सरीखे विस्तृत और बहु भाषा भाषी देश में शासन की सुगमता के लिये तो एक राजभाषा का होना नितान्त आवश्यक है ही, वहं राष्ट्रीय समागम अर्थात् विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम भी होती है। संविधान में देवनागरी में लिखित हिन्दी को भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप सहित संघ की राजभाषा माना है। परन्तु पन्द्रह वर्ष तक संघ के सब अधिकृत कार्यों के लिये अंग्रेजी भाषा का प्रयोग होता रहेगा। साथ ही ऐसे उपबन्ध कर दिये गये हैं कि नियत अवधि की समाप्ति से पूर्व ही अधिकृत कार्यों में हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग किया जायगा। परन्तु राज्यों के विधानमण्डल राज्य में प्रयुक्त एकाधिक भाषा को प्रादेशिक भाषा के रूप में अंगीकृत कर सकते हैं। ऐसी चौदह भाषाओं को हिन्दी सहित आठवीं अनुसूची में परिगणित किया गया है। विधानमण्डल हिन्दी को भी राजभाषा के रूप में प्रयुक्त कर सकते हैं।

अनुसूचित और जन-जाति या कबायली क्षेत्रों के लिये विशेष उपबन्ध

संविधान की एक और विशेषता अनुसूचित और जन-जाति क्षेत्रों के लिये विशेष उपबन्ध हैं। इनका प्रयोजन अनुसूचित जन-जातियों के सुख और सामाजिक स्वायत्तता का निश्चय करना है। प्रथम दस वर्ष तक विधानमण्डलों में कुछ स्थान उनके लिये सुरक्षित रखे जायेंगे। अनुसूचित और जनजाति क्षेत्रों के शासन के लिये भी विशेष उपबन्ध किये गये हैं। उदाहरणार्थ, आसाम में जन-जाति क्षेत्रों के लिये जिला परिषदें और स्वायत्त प्रादेशिक परिषदें संगठित की जायेंगी। इनके द्वारा जन-जातियों के लोगों को शासन में पर्याप्त भाग मिल सकेगा। अन्य राज्यों में जन-जातियों के लोगों का शासन में योग प्राप्त करने के लिये मन्त्रणा परिषदें बनायी जायेंगी। संविधान में यह उपबन्ध भी है कि जन-जातियों और अनुसूचित जातियों के लिये उत्तरदायी कोई मन्त्री होना चाहिये। एक विशेष पदाधिकारी समय-समय पर इन रक्षाकवचों (सेफगार्ड्स) के कार्य का प्रतिवेदन या रिपोर्ट दिया करेगा। अन्त में, एक विशेष आयोग या कमीशन अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और अनुसूचित जन-जातियों के कल्याण के विषय में प्रतिवेदन या रिपोर्ट देगा।

नागरिकता

भारतीय संविधान में एक सामान्य नागरिकता का उपबन्ध है। संघीय संविधानों की दुहरी नागरिकता को इस में नहीं अपनाया गया।

निम्न तीन प्रकार के लोग भारतीय नागरिकता के अधिकारी हो सकते हैं :—

(१) जो भारत में बसे हुये हैं,

(२) जो शरणार्थी पाकिस्तान से भारत में आय हैं, और

(३) समुद्र पार के भारतीय।

परन्तु ये उपबन्ध न पूर्ण हैं, और न अन्तिम। इस विषय पर विशद विधि-निर्माण या कानून बनाने का काम संसद् या पार्लियामेंट पर छोड़ दिया गया है।

संविधान जिन व्यक्तियों को नागरिक मानता है, उनकी प्रथम श्रेणी में निम्नलिखित श्रेणियों के लोग अन्तर्भुक्त होते हैं :--

(क) जो भारत में वसे हुए हों,

(ख) जिनके माता पिताओं में से एक का जन्म भारत में हुआ हो, अथवा

(ग) जो कम से कम पांच वर्प से साधारणतया भारत की भूमि के निवासी रहे हों, परन्तु उन्होंने स्वेच्छापूर्वक किसी अन्य देश की नागरिकता स्वीकार न कर ली हो।

इस प्रकार भारत ने नागरिकता के तीन आधार अंगीकृत किये हैं, अर्थात् जन्म, वंश और निवास। ये उपवन्ध या नियम कई दृष्टियों से संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के संविधान की अपेक्षा कठोरतर हैं। उस में केवल जन्म को नागरिकता का यथेष्ट आधार माना गया है। भारतीय संविधान में एक अतिरिक्त योग्यता आवश्यक है। उस व्यक्ति का भारत में स्थायी निवास होना चाहिये।

द्वितीय श्रेणी में वे लोग आते हैं, जिन्होंने पाकिस्तान से भारत में प्रव्रजन या निर्गमन किया है, अथवा जो पाकिस्तान से भारत में भारतीय प्राधिकारियों की स्थायी अनुज्ञा या परमिट प्राप्त करके आये हैं। पाकिस्तान से आये हुये स्थानभ्रष्ट व्यक्ति संविधान लागू होने के समय भारत के नागरिक माने जायेंगे, यदि

(क) उनका या उनके माता-पिताओं या दादा-दादियों या नाना-नानियों में से किसी का जन्म विभाजन से पूर्व के भारत में हुआ हो,

(ख) उन्होंने जुलाई १९४८ से पूर्व प्रव्रजन या निर्गमन कर लिया था, और वे प्रव्रजन की तिथि के पश्चात् साधारणतया भारत की भूमि पर ही निवास करते रहे हों, और

हमारे मतदाता ●

१९१९ के ऐक्ट
के अनुसार
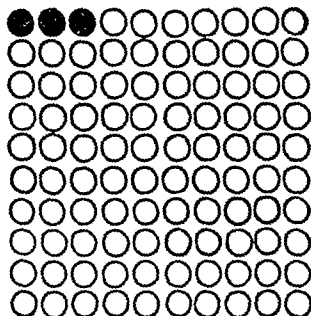
१९३५ के एक्ट
के अनुसार
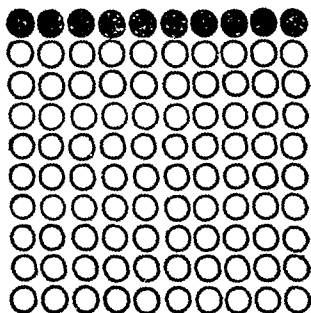
नये संविधान
के अनुसार
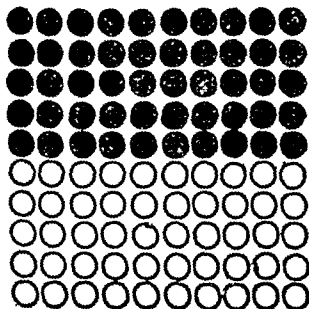
(ग) उन्होंने जुलाई १६४८ में अथवा उसके पश्चात् प्रव्रजन किया हो, तो वे संघ के अधिकारियों को प्रार्थनापत्र देकर अपने आपको भारत का नागरिक पंजीबद्ध या रजिस्टर करा चुके हों ।

अन्तिम श्रेणी के विषय में यह रक्षण या रिज़र्वेशन है कि ऐसा कोई व्यक्ति भारत के नागरिकों में पंजीबद्ध या रजिस्टर नहीं किया जायगा, जो अपने प्रार्थनापत्र की तिथि से पूर्व कम से कम छः मास तक भारत की भूमि पर निवास न कर चुका हो । ये उपबन्ध वस्तुतः सरकार की इस नीति के अनुसार हैं कि जो स्थानभ्रष्ट व्यक्ति जुलाई १६४८ से पहिले पाकिस्तान से भारत आ गये थे, उन सभी को स्वीकार कर लिया जाय, परन्तु उसके पश्चात् केवल उनको ही स्वीकार किया जाय जो भारत के पंजीबद्ध नागरिक बन गये हों । जो लोग पहली मार्च १६४७ के पश्चात् पाकिस्तान को प्रव्रजन कर गये थे, उनको संविधान नागरिकता प्रदान नहीं करता, परन्तु जो स्थायी निवास की अभिलाषा से अनुज्ञा या परमिट लेकर पाकिस्तान से भारत लौट आये थे, उनको इसमें अपवाद मान लेता है । यह उपबन्ध उन मुसलमानों अथवा उनके परिवारों की सहायता करने के लिये है, जो पाकिस्तान में स्थायी रूप से बसने का कोई इरादा किये बिना, झगड़ों के समय वहां चले गये थे ।

अन्त में भारत से बाहर रहने वाले भारतीय मूल के लोगों को भी नागरिकता का अधिकार प्रदान कर दिया गया है । उनमें वे सब लोग सम्मिलित हैं, जिनका स्वयं अथवा जिनके माता पिताओं या दादा दादियों या नाना नानियों में से किसी का जन्म अविभक्त भारत में हुआ था, और जो अपने आपको भारत के विदेश स्थित राजनयिक या कूटनीतिक, अथवा वाणिज्यिक या कौन्सलर प्रतिनिधियों द्वारा भारत का नागरिक पंजीबद्ध या रजिस्टर करवा लें ।

मौलिक अधिकार

किसी भी राज्य का आधार अधिकार ही होते हैं। उनके कारण ही राज्य को अपनी शक्ति के प्रयोग में नैतिक वल प्राप्त होता है। और वे इस अर्थ में प्राकृतिक होते हैं कि अच्छे जीवन के लिये उनकी नितांत आवश्यकता होती है। उनको देश के संविधान का अंग वना देने से वे अन-पहरणीय हो जाते हैं। जनता और शासन दोनों ही उनका आदर करने लगते हैं। प्रत्येक नागरिक में ये अधिकार मौलिक रूप से न्यस्त होने के कारण, उनकी रक्षा के लिये न्यायालयों की सहायता ली जा सकती है; परन्तु कुछ अधिकारों की रक्षा न्यायालयों द्वारा नहीं हो सकती, अतएव उनको संविधान में स्थान देकर अधिक आदेशमूलक तथा पहले की तुलना में कम अपहरणीय वना दिया जाता है। शिक्षण की दृष्टि से वे वड़े मूल्य-वान हैं। उनसे लोगों को नागरिकता का शिक्षण मिलता है।

मौलिक अधिकारों के सिद्धान्त में ही शासन का सीमित होना अन्तर्निहित है। इसका लक्ष्य शासन और विधानमण्डल को स्वेच्छाचारी होने से रोकना है। उनकी शक्ति सीमित कर देने से व्यक्तियों को आत्मविकास का अवसर मिलता है। परन्तु ये अधिकतर निरवच्छिन्न नहीं हैं, ये राज्य द्वारा लगाये गये प्रतिवन्धों द्वारा सीमित है, जिससे सब व्यक्तियों के अधिकार और समाज अथवा राज्य के व्यापक हित सुरक्षित रहें।

भारतीय संविधान सब नागरिकों को व्यक्तिशः और समष्टिशः, लोकतन्त्र के उत्कृष्ट लाभ और जीवन की वे सब आधारभूत स्वतन्त्रतायें तथा सुविधायें प्रदान करता है, जिनके कारण ही जीवन अर्थपूर्ण और विकसित होता है। संविधान के भाग ३ में जो अधिकार परिगणित किये गये हैं, उनको मौलिक घोषित किया गया है, और उनकी रक्षा के लिये न्यायालयों की सहायता ली जा सकती है। अन्य सब विधियां या कानून जो उनसे असंगत है, अथवा जो उन अधिकारों को अपहृत या न्यून करते हैं, नष्ट या रद्द माने जायेंगे। मौलिक अधिकारों का श्रेणी विभाजन निम्न प्रकार से किया गया है:—

१. समता का अधिकार,
२. स्वतन्त्रता का अधिकार,
३. धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार,
४. संस्कृति और शिक्षा का अधिकार,
५. सम्पत्ति का अधिकार, और
६. सांविधानिक उपचारों का अधिकार।

समता का अधिकार

नया संविधान नागरिक और सामाजिक समानता को भारतीय शासन पद्धति की नींव मान कर चलता है। धर्म, मूलवंश या नस्ल, जाति,

लिंग अथवा जन्मस्थान के कारण किसी भी नागरिक के साथ भेदभाव के वर्ताव का प्रतिपेध किया गया है। राज्याधीन नौकरियों में सबके लिये समान अवसर का विश्वास दिलाया गया है। एकमात्र अपवाद यह है कि कुछ अवस्थाओं में विधानमण्डल को निवास सम्बन्धी अर्हता या योग्यता निर्धारित करने अथवा राज्याधीन नौकरियों में कुछ स्थान अनुन्नत वर्गों के लिये रक्षित या रिज़र्व रखने का अधिकार दिया गया है, क्योंकि राज्य की सम्मति में नौकरियों में उनका प्रतिनिधित्व पर्याप्त नहीं है। अनुन्नत वर्गों की परिभाषा राज्यों की सरकारों पर छोड़ दी गई है।

भारत में सामाजिक समता की स्थापना के लिये एक और महत्त्व-पूर्ण कदम संविधान में यह उठाया गया है कि देशी या विदेशी खितावों का अन्त कर दिया गया है, क्योंकि इनके कारण जनता में कृत्रिम भेदभाव फैलता था। केवल सेना या विद्या सम्बन्धी उपाधियां यथापूर्व जारी रहेंगी।

अस्पृश्यता का अन्त

महात्मा गांधी ने जो महती सामाजिक क्रान्ति की थी, उस पर संवि-धान ने विधिवत् या कानूनी छाप लगा दी है। इसने भारत के लगभग पांच करोड़ अस्पृश्यों को उनकी पीढ़ियों पुरानी हीन स्थिति से ऊपर उठा दिया है। इसमें लिखा है कि अस्पृश्यता का अन्त किया जाता है और किसी भी रूप में इस पर आचरण प्रतिपिद्ध या निपिद्ध है। अस्पृश्यता के कारण किसी को किसी भी कार्य के लिये अयोग्य या असमर्थ ठहराकर आचरण करना विधि द्वारा या कानूनन दण्डनीय अपराध होगा। अस्पृश्यता को विधि वहिष्कृत या कानून के विरुद्ध ठहरानेवाला यह खण्ड अकेला ही समता की गारण्टी करनेवाले समस्त सांविधानिक अधिकारों से अधिक मूल्यवान है। हिन्दू समाज को भ्रष्ट करने वाली सर्वाधिक पतनकारी सामाजिक विपमता का इसने अन्त कर दिया है। जिन सामाजिक रीति

रिवाजों अथवा अयोग्यताओं के कारण अस्पृश्यों को कुओं, सड़कों, स्कूलों और पूजा के स्थानों पर बलात् पृथक रखा जाता था, वे सब विधि या कानून के विरुद्ध घोषित कर दिये गये हैं। वस्तुतः इस प्रतिषेध में निर्दिष्ट अथवा अनिर्दिष्ट सभी प्रकार की अस्पृश्यता का समावेश हो गया है। अनेक प्रचलित सामाजिक अयोग्यताओं तथा असमर्थताओं का निवारण करके सार्वजनिक स्थानों में सबके लिये समता की गारण्टी कर दी गई है। यह उपबन्ध है कि केवल धर्म, मूलवंश या नस्ल, जाति, लिंग, जन्मस्थान अथवा इनमें से किसी के आधार पर कोई नागरिक :—

(क) दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों तथा सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश के, अथवा

(ख) पूर्ण या आंशिक रूप में राज्य-निधि से पोषित अथवा साधारण जनता के उपयोग के लिये समर्पित कुओं, तालाबों, स्नान घाटों, सड़कों तथा सार्वजनिक समागम स्थानों के उपयोग के बारे में किसी भी निर्योग्यता, दायित्व या देनदारी, निर्बन्ध या पाबन्दी अथवा शर्त के अधीन न होगा।

अस्पृश्यों को विधिसंगत या कानूनी समता की स्थिति प्रदान कर दिये जाने के पश्चात् भारत में सामाजिक लोकतन्त्र के एक नवीन युग का आरम्भ हो गया है। समता का अथवा रंग के आधार पर पृथक्वास के विरुद्ध विधि या कानून द्वारा रक्षा का यह अधिकार अभी अनेक उन्नत देशों में भी स्वीकार नहीं किया गया है। परन्तु भारतीय संविधान के अनुसार रंग अथवा जाति के आधार पर सार्वजनिक स्थानों, गाड़ियों, और शिक्षा संस्थाओं में पृथकता का आचरण अपराध है, और यह समता के अधिकार का प्रत्यक्ष उल्लंघन है।

वैयक्तिक स्वतन्त्रता

अपने लोकतान्त्रिक उद्देश्यों के अनुसार, नवीन संविधान ने भारत के सब लोगों को मौलिक अधिकारों और स्वतन्त्रता की गारन्टी देने का यत्न किया है। सब नागरिकों को वाक् स्वातन्त्र्य और अभिव्यक्ति-स्वातन्त्र्य या भाव प्रकाशन की स्वतन्त्रता का, शान्तिपूर्वक और निरायुध सम्मेलन का, संस्था या संघ बनाने का, भारत के राज्य क्षेत्र में सर्वत्र अबाध संचरण का, भारत राज्य क्षेत्र के किसी भाग में निवास करने और बस जाने का, सम्पत्ति के अर्जन या प्राप्त करने, धारण स्वामित्व और व्ययन का, तथा कोई वृत्ति, उपजीविका, व्यापार या कारबार करने का अधिकार होगा।

परन्तु ये अधिकार किसी भी प्रकार निरवच्छिन्न नहीं हो सकते, और न व्यवहारतः वैसे हैं। संविधान राज्य को शक्ति देता है कि वह सार्वजनिक व्यवस्था, शिष्टाचार, सदाचार और राज्य की सुरक्षा के प्रयोजन से; और साधारण जनता के हितों में इन अधिकारों पर कोई भी युक्तियुक्त निर्बन्ध या पाबन्दी लगा सकता है। अपमानवचन, अपमान-लेख, मान-हानि और न्यायालय अवमान के सम्बन्ध में विधि या कानून बनाने की राज्य की शक्ति को भी यह सुरक्षित करता है।

कभी-कभी कहा जाता है कि संविधान के अपवादात्मक खण्ड, उन्नीसवें अनुच्छेद द्वारा रक्षित अधिकारों का बल कम कर देते हैं। यह विचार भ्रांत है। कोई अधिकार कभी निरवच्छिन्न नहीं होता। वे सदा समाज और जनता के व्यापक हितों को सुरक्षित तथा समुन्नत करने के लिये राज्य द्वारा लगाये हुये निर्बन्धों या पाबन्दियों के अधीन होते हैं। अमेरिकन संविधान में भी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकारों पर लगाये हुये कुछ निर्बन्ध या पाबन्दियां राज्य के लिये परमावश्यक मानी गयी हैं।

वैयक्तिक स्वतन्त्रता और विधि या कानून द्वारा शासन को भारतीय संविधान में भी स्थान दिया गया है। किसी व्यक्ति को किसी अपराध

के लिये तब तक सिद्धदोष या दण्डित नहीं किया जा सकता जब तक कि उसने अपराधारोपित क्रिया करने के समय किसी प्रवृत्त विधि या चालू कानून का अतिक्रमण न किया हो, और न वह उससे अधिक दण्ड का पात्र होगा जो उस अपराध करने के समय प्रवृत्त विधि या चालू कानून के अधीन दिया जा सकता था। व्यक्तियों को उपलब्ध अन्य विधि सम्बन्धी या कानूनी सुविधायें ये हैं कि किसी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिये एक बार से अधिक अभियोजित या अभियुक्त और दण्डित न किया जायेगा, और न किसी अपराध में किसी अभियुक्त व्यक्ति को स्वयं अपने विरुद्ध साक्षी होने के लिये बाध्य किया जायेगा। विधि या कानून द्वारा शासन का सिद्धान्त अन्य उपबन्धों या नियमों द्वारा भी स्वीकार किया गया है। किसी व्यक्ति को अपने प्राण अथवा दैहिक स्वाधीनता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया को छोड़कर अन्य प्रकार से वंचित नहीं किया जा सकता। न किसी को विधि या कानून के सम्मुख समता अथवा विधि या कानून द्वारा प्राप्त समान संरक्षण से वंचित किया जा सकेगा।

बिना मुकदमे के बन्दीकरण या नजरबन्दी भारत की जनता के लिये एक अभिशाप रहा है। इस कारण संविधान में मनमाने बन्दीकरण और अनिश्चित अवधि तक निरोध के विरुद्ध उपाय सम्मिलित कर दिये गये हैं। इसमें उपबन्ध है कि कोई व्यक्ति जो बन्दी किया गया है, ऐसे बन्दीकरण के कारणों से यथाशक्य शीघ्र अवगत कराये बिना हवालात में निरुद्ध नहीं किया जायेगा, और न अपनी रुचि के विधि-व्यवसायी या वकील से परामर्श करने तथा प्रतिरक्षा या सफाई देने या कराने के अधिकार से वंचित रखा जायेगा। निरोध की अवस्था में अंगीकृत की जाने वाली प्रक्रिया की भी परिभाषा कर दी गई है। यदि किसी व्यक्ति का निरोधार्थ बन्दीकरण हुआ है, तो उसके निरोध की अधिकतम कालावधि तीन मास निश्चित की गई है, और इस अवधि को उच्च न्यायालय या हाईकोर्ट के न्यायाधीश नियुक्त होने की अर्हता या योग्यता रखनेवाले

व्यक्तियों की मन्त्रणा से ही बढ़ाया जा सकता है। इसमें यह उपबन्ध या व्यवस्था भी है कि निरोध का आदेश देनेवाला प्राधिकारी निरुद्ध व्यक्ति को वे आधार बतलाये जिन पर कि वह आदेश दिया गया है, तथा उस आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन या आवेदन करने के लिये उसे शीघ्रातिशीघ्र अवसर दे। इस सुविधा से मुक्त केवल उन व्यक्तियों को किया गया है जो (१) तत्समय भारत के शत्रुदेशीय समझे जायं, (२) निवारक निरोध में हों।

समता के अधिकार के अनुच्छेद के अनुसार व्यापार और वाणिज्य की स्वतन्त्रता की गारण्टी दी जाती है। मानव का पण्य अर्थात् मनुष्यों का व्यापार, बलात् श्रम और कारखानों, खानों या किसी दूसरी संकटमय नौकरी में बालकों का लगाना प्रतिषिद्ध कर दिये गये हैं।

धर्म की स्वतन्त्रता

धार्मिक सहिष्णुता की परम्परा और उद्देश्य सम्बन्धी संकल्प या प्रस्ताव की उदारता पर आचरण करते हुये, भारत के नवीन संविधान ने सब को धर्म की स्वतन्त्रता की गारण्टी दी है। केवल सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार, स्वास्थ्य और अन्य आवश्यक उपबन्धो या व्यवस्थाओं के अधीन रहते हुये सब व्यक्तियों को अन्तःकरण की स्वतन्त्रता का तथा धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने का हक़ है। इस अधिकार की और भी गारण्टी प्रत्येक धार्मिक सम्प्रदाय को अपने धार्मिक अथवा धर्मार्थ सम्पत्ति के स्वामित्व, उसके अर्जन या प्राप्ति, और प्रशासन या इन्तज़ाम की स्वायत्तता देकर की गई है। सिखों को कृपाण धारण करने और उसे लेकर चलने का अधिकार इसी प्रकार प्राप्त होता है। परन्तु धार्मिक स्वतन्त्रता पर कुछ निर्बन्ध या पाबन्दियां भी लगा दी गई हैं, जिससे कि धर्म का उपयोग राजनीतिक साधन के रूप में अथवा सामाजिक प्रतिक्रिया के समर्थन के लिये न किया जा सके। फलतः किसी भी व्यक्ति को किसी विशेष धार्मिक सम्प्रदाय की उन्नति

या पोषण के लिये कर देने को बाध्य नहीं किया जायगा और न किसी के लिये राज्य से अभिज्ञात या स्वीकृत अथवा राज्यनिधि से सहायता पाने वाली संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक उपासना बाध्य होगी। संविधान राज्य द्वारा चालित और पोषित किसी भी शिक्षा संस्था में धार्मिक शिक्षा देने का निषेध करता है।

संस्कृति और शिक्षा सम्बन्धी अधिकार

संविधान सभा के एक सदस्य के शब्दों में, नया संविधान अल्पसंख्यकों के अधिकारों के लिये युगप्रवर्तक है। यह सब अल्पसंख्यकों को अपने धर्म पर आचरण करने और अपनी विशेष संस्कृति, भाषा और लिपि बनाये रखने का अधिकार देता है। इस प्रकरण में अल्पसंख्यक शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया गया है। और उसमे किसी विशिष्ट स्थान पर रहने वाले सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों का भी ग्रहण हो जाता है। डा० अम्बेडकर की व्याख्या के अनुसार मुख्य प्रयोजन इस बात को ध्यान रखना था कि यदि कोई सांस्कृतिक अल्पसंख्यक अपनी विशिष्ट भाषा और संस्कृति की रक्षा करना चाहें तो राज्य उन पर विधि या कानून द्वारा किसी अन्य स्थानीय अथवा अस्थानीय संस्कृति को न लादे। धर्म या भाषा पर आधारित सब अल्पसंख्यकों को अपनी शिक्षा संस्थाओं के स्थापन और प्रशासन या इन्तजाम का अधिकार दिया गया है, और उन्हें सहायता या ग्राण्ट देने में ऐसी किसी भी संस्था के विरुद्ध विभेद करने का राज्य को प्रतिषेध कर दिया गया है। राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य निधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक को केवल धर्म, मूलवंश, जाति अथवा भाषा के आधार पर रोका नहीं जा सकता। इस प्रकार अल्पसंख्यकों को अपनी शिक्षा संस्थाओं के अतिरिक्त, बहुसंख्यकों को प्राप्त शिक्षा की सब सुविधायें भी उपलब्ध रहेंगी।

सम्पत्ति का अधिकार

भारतीय संविधान ने राज्य द्वारा किसी को सम्पत्ति से वंचित किये जाने का प्रतिषेध या निषेध कर दिया है। किसी सम्पत्ति को सार्वजनिक प्रयोग के लिये बाध्यतामूलक रूप से प्राप्त किये जाने पर यह प्रतिकर या मुआवज़ा दिये जाने का उपबन्ध करता है। इसका उपबन्ध है कि कोई व्यक्ति विधि के प्राधिकार या कानूनी अख्तियार के बिना अपनी सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जायगा। प्रतिकर या मुआवज़े के विषय में इसके शब्द हैं "कोई स्थावर और जंगम सम्पत्ति, जिसके अन्तर्गत किसी वाणिज्यिक या औद्योगिक उपक्रम या संगठन में या उसकी स्वामिनी किसी कम्पनी में कोई अंश भी है, ऐसी विधि या कानून के आधीन जो ऐसा क़ब्ज़ा (पोजेश्शन) या अर्जन करने का प्राधिकार देती है, सार्वजनिक प्रयोजन के लिये कब्ज़ाकृत या अर्जित तब तक नहीं की जायेगी जब तक कि वह विधि कब्ज़ाकृत या अर्जित सम्पत्ति के लिये प्रतिकर या मुआवज़े का उपबन्ध न करती हो, और या तो प्रतिकर की राशि को नियत न कर दे या उन सिद्धान्तों और रीति का उल्लेख न कर दे जिनसे प्रतिकर निर्धारित होना है और दिया जाना है।" एक अतिरिक्त उपबन्ध या व्यवस्था यह है कि अनिवार्य अर्जन के लिये बनायी गयी राज्य की कोई विधि या कानून तब तक प्रभावी नहीं होगा, जब तक कि उसे राष्ट्रपति की अनुमति न मिल गयी हो।

दो विषयों की निर्णायक एकमात्र संसद् या पार्लियामेंट होगी : अर्जन के सिद्धान्त के औचित्य की और प्रतिकर या मुआवज़े सम्बन्धी निर्धारण की। न्यायालय में आपत्ति तभी हो सकेगी, जब संविधान का उल्लंघन हुआ हो, अथवा प्रतिकर या मुआवज़े का निर्धारण भ्रान्त रूप से हुआ हो। उचित प्रतिकर विधि की आवश्यक प्रक्रिया अथवा पर्याप्त प्रतिकर (ड्यू प्रोसेस आव ला अथवा ऐडिक्वेट काम्पेन्सेशन) आदि वाक्यांशों

का प्रयोग जान बूझ कर नही किया गया, जिससे कि न्यायालयों में उलझन-भरी अपीलें और अनावश्यक मुकदमेबाजी न होने पावें ।

संविधान ने जमींदारी प्रथा का अन्त करने के लिये विचाराधीन विधानों को अपने क्षेत्राधिकार मे मुक्त कर दिया है । यह विधान तभी मान्य होंगे, जब उन पर राष्ट्रपति की अनुमति मिल जायेगी । इस अपवाद का लाभ यह होगा कि भूमि विधि या जमीन कानून में एक महत्व-पूर्ण सुधार को विलम्बित मुकदमेबाजी द्वारा विनष्ट नही किया जा सकेगा ।

संविधान ने राज्य को यह अधिकार भी दिया है कि वह सार्वजनिक स्वास्थ्य की समुन्नति अथवा प्राण या सम्पत्ति के सम्भावित संकट के निवारणार्थ कर लगाने या दण्ड देने वाली विधि या कानून बना सके । कुछ अन्य विधियां या कानून भी जैसे कि निष्क्रान्त सम्पत्ति सम्बन्धी विधि, न्यायालयों के क्षेत्राधिकार से मुक्त रखे गये है ।

सांविधानिक उपचारों के अधिकार

सांविधानिक उपचारों के उपबन्ध, जैसा कि डा० अम्बेडकर ने कहा है, "समस्त संविधान के प्राण और आत्मा हैं ।" अधिकार निरर्थक हो जाते हैं यदि उन्हें प्रभावी और सुरक्षित करने के लिये कोई सांविधानिक उपाय न हो । प्रत्येक नागरिक को मौलिक अधिकारों को प्रभावी करने के लिये सर्वोच्च न्यायालय में प्रत्यावेदन करने का या मेमोरियल भेजने का अधिकार है । इन अधिकारों की रक्षा के लिये सर्वोच्च न्यायालय को साधारण शक्तियां तो हैं ही, बन्दी प्रत्यक्षीकरण (हैबियस कार्पस) और परमादेश (मैन्डेमस) आदि के सम्बन्ध में आदेश जारी करने की विशेष शक्तियां भी प्राप्त हैं ।[८]

---

८ हाईकोर्ट अथवा सुप्रीमकोर्ट को अधिकार होता है कि वह अपने

संविधान में इन लेखों को सम्मिलित कर लेने से व्यक्ति की स्वतन्त्रता की गारन्टी हो जाती है। इस समय विधान मण्डल इच्छामात्र से उनका अन्त कर सकता है। संविधान पर आचरण आरम्भ हो जाने के पश्चात् वे मूल विधि का अंग बन जायेंगें, और संविधान में संशोधन किये विना उनमें परिवर्तन नहीं किया जा सकेगा। परन्तु संसद् या पार्लियामेंट को प्राधिकार दिया गया है कि वह इन शक्तियों को किसी भी न्यायालय को अपने क्षेत्राधिकार की स्थानीय सीमा में प्रयोग के लिये प्रदान कर सकती है। सांविधानिक उपचारों के प्रयोग का अधिकार घोषित आपात या संकटकाल के अतिरिक्त अन्य किसी अवस्था में स्थगित नहीं किया जा सकता। तब भी यह आवश्यक नहीं कि ये अधिकार समस्त भारत में ही स्थगित हो जायें। स्थगित करने की शक्ति भी अनियन्त्रित नहीं है। भारतीय संविधान की स्थिति इस सम्बन्ध में बहुत कुछ संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की परम्परा से मिलती जुलती है। इस प्रकार केन्द्रित विधानमण्डल को तो पूर्ण शक्ति प्राप्त है, परन्तु राज्य की कार्यपालिका के प्रधान के अधिकार स्थगित करने की शक्ति केवल अन्तःकालिक है। आपात या संकटकाल का अंत होते ही अधिकारों का प्रयोग पुनर्जीवित हो जाता है।

परन्तु संसद् या पार्लियामण्ट को प्राधिकार है कि वह सशस्त्र बलों या सेनाओं के लिये मूल अधिकारों के प्रयोग को निर्बन्धित या पाबन्दी-

---

अधीन न्यायालयों या पुलिस आदि के नाम विशेष लिखित आज्ञायें 'लेख' अथवा रिट जारी कर दे। इन लेखों के प्रकार ये हैं: हैवियस कार्पस अथवा बन्दी-प्रत्यक्षीकरण अर्थात् बन्दी किये हुय व्यक्ति को सामने पेश करना; मैन्डेमस अथवा परमादेश अर्थात् अधीन न्यायालय के नाम ऊपर के न्यायालय का आदेश; क्वो वारन्टो अथवा अधिकार पृच्छा अर्थात् इस आशय की आज्ञा कि हमें बतलाओ कि अमुक कार्रवाई किस अधिकार पर की गयी; और सर्टिओरैटी अथवा उत्प्रेक्षण अर्थात् अधीन न्यायालय से उच्च न्यायालय में कागजात भेजने की आज्ञा।

युक्त या निराकृत (ऐब्रोगेटड) कर दे। किसी राज्याधीन सेवक (पब्लिक सर्वेण्ट) को भी सेना-विधि या फौजी कानून के अधीन किये हुये किसी काम के विषय में तारण (बरीअत) दिया जा सकेगा। सेना-विधि या फौजी कानून के चालू रहते समय दिये गये किसी दण्डादेश या सजा की आज्ञा अथवा दण्ड को भी संसद् मान्य कर सकेगी, जायज करार दे सकेगी अर्थात् उस पर कानूनी छाप लगा सकेगी।

इन निर्बन्धनों या पाबन्दियों के होते हुये भी, संसद् या पार्लियामेंट को प्राधिकार है कि वह इन अधिकारों को प्रभावी करने के लिये और इनके विरुद्ध किये गये अपराधों को दण्डित करने के लिये विधि या कानून बनाये। इन विषयों में प्रचलित वर्तमान विधियां या क़ानून और दण्ड तब तक जारी रहेंगे, जब तक कि संसद् या पार्लियामेण्ट उनका परिवर्तन अथवा अन्त न कर दे। इन विधियों या कानूनों को बनाने की और इनके विरुद्ध अपराधों के लिये दण्ड विहित करने की शक्ति संसद या पार्लियामेण्ट को रहेगी, किसी राज्य के विधान-मण्डल को नहीं। इस उपबन्ध या व्यवस्था को रखने की आवश्यकता का कारण डा० अम्बेडकर ने यह बतलाया है कि मूल अधिकार और उनके उल्लंघन का दण्ड समस्त भारत में एक सा रहे।

राज्य की नीति के निदेशक तत्वों या सिद्धान्तों का उल्लेख जिस भाग में किया गया है, वह हमारे संविधान की एक विशेषता है। भारत में इसका समावेश आवश्यक समझा गया, और इसका एकमात्र उदाहरण आयरलैण्ड के गणराज्य के संविधान में मिलता है। यह भाग भावी विधानमंडलों और कार्यपालिकाओं को निदेश देता है जिससे उनके अधिकार का प्रयोग नियन्त्रित हो जाय। अभिप्राय यह है कि ये सांविधानिक औचित्य की कसौटी या रीढ़ बन जायें, जिनके द्वारा जनता के साथ शासन का सम्बन्ध निर्धारित होता रहे। ये तत्व या सिद्धान्त राज्य की नीति के दृढ़ आधार बन जाने चाहिये।

परन्तु राज्य शब्द के दो अर्थ हैं। संश्लिष्ट रूप में यह भारत के शासन या सरकार तथा संसद् या पार्लियामेंट को और प्रत्येक राज्य के शासन तथा विधान-मण्डल को सूचित करता है। विशिष्ट रूप में यह शब्द ज़िला मण्डलियों या बोर्डों, स्थानीय निकायों या संस्थाओं और ग्राम पंचायतों तक को सूचित करता है।

आर्थिक लोकतन्त्र की ओर

लोकतन्त्र को वास्तविक और प्रभावशाली बनाने के लिये एक निदेशक तत्व या सिद्धान्त आदेश देता है कि यह आर्थिक और राजनीतिक दोनों प्रकार का होना चाहिये। इसका अभिप्राय है कि एक मनुष्य, एक मूल्य, यद्यपि संविधान में इस लक्ष्य तक पहुंचने के लिये किसी विशेष उपाय का उल्लेख नहीं किया गया। परन्तु इसमें यह निदेश अवश्य है कि केन्द्र में और राज्यों में प्रत्येक शासन को चाहिये कि वह लोकतन्त्रात्मक आर्थिक संगठन निर्माण करने का यत्न करे। डा० अम्बेडकर ने कहा था : "इसमें आदेश है कि परिस्थितियां कितनी भी विपरीत क्यों न हों, शासन को इस तत्व की पूर्ति का यत्न तो करना ही चाहिये।"

संविधान सामाजिक सुरक्षा के जिन आर्थिक अधिकारों, तत्वों या सिद्धान्तों की राज्य द्वारा जनता के लिये पूर्ति कराना चाहता है, वे ये हैं :–

१. जीविका के लिये पर्याप्त साधनों की प्राप्ति,

२. धन का समान वितरण,

३. समान कार्य के लिये समान वेतन,

४. किशोर और वयस्क श्रम का संरक्षण,

५. रोज़गार की प्राप्ति,

६. चौदह वर्ष की आयु के बालकों के लिये बिना मूल्य और बाध्य या अनिवार्य शिक्षा,

७. बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी, अंगहानि तथा अन्य अनर्ह अभाव (अनडिजर्व्ड वान्ट) की दशाओं में सार्वजनिक सहायता,

८. निर्वाहयोग्य मजदूरी,

९. काम की ऐसी दशायें जिनमें शिष्ट जीवनस्तर, अवकाश का सम्पूर्ण उपभोग तथा सामाजिक और सांस्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का सुनिश्चय हो, और

१०. आहार की पुष्टि के तल को ऊंचा करना और लोकस्वास्थ्य का सुधार। अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन-जातियों, तथा जनता के दुर्बलतर या पिछड़े हुये विभागों के शिक्षा तथा अर्थ सम्बन्धी हितों की उन्नति करने पर विशेष बल दिया गया है।

इन निदेशों में ऐसे भी अन्य अनेक विषय है, जिनकी इस देश की जनता दीर्घकाल से मांग करती रही है। इन में कुछ ये है :

१. ग्राम पंचायतों का संघटन,

२. नागरिकों के लिये एक समान व्यवहार संहिता (सिविलकोड),

३. मादक प्रतिषेध,

४. कृषि और पशु पालन का संघटन,

५. दुधारू और वाहक ढोरों के वध का प्रतिषेध,

६. राष्ट्रीय और ऐतिहासिक महत्त्व के स्मारकों, स्थानों और वस्तुओं का संरक्षण, परिरक्षण और पोषण, और

७. कार्यपालिका से न्यायपालिका का पृथक्करण ।

देश की उच्च सदाचारिक परम्पराओं और उसकी विश्वशान्ति की रक्षा की इच्छा के अनुसार यह भी निदेश दिया गया है कि भारत अपनी विदेश नीति में अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा की उन्नति का, राष्ट्रों के बीच न्याय और सम्मानपूर्ण सम्बन्धों को बनाये रखने का, अन्तर्राष्ट्रीय विधि या कानून और सन्धि बन्धनों के प्रति आदर बढ़ाने का और अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को मध्यस्थता द्वारा निबटारे के लिये प्रोत्साहन देने का प्रयास करेगा ।

भारतीय संघ

भारतीय संविधान में भारत को राज्यों का संघ बतलाया गया है। इसके नाम से ही इस की एकता की अनश्वरता व्यक्त होती है। कोई एकक या इकाई संघ से पृथक् नहीं हो सकती। "शासन की सुगमता के लिये अनेक एककों अथवा राज्यों में विभाजित होने पर भी, देश एक और अविभाज्य है, इसकी जनता एक जनता है, और वह एक शासन के अधीन है जिसका स्रोत एक ही है।" राज्यों के सत्ताईस एकक या इकाइयां हैं, जो प्रथम अनुसूची के भाग (क), (ख) और (ग) में उल्लिखित हैं।

इन राज्यों में गवर्नरों के प्रान्त, रियासत संघ, केन्द्र द्वारा शासित रियासतें, चीफ कमिश्नरों के प्रान्त और अन्य भारतीय रियासतें सम्मि-लित हैं। एककों या इकाइयों की संख्या-बहुलता ब्रिटिश शासन की विरासत है। परन्तु बहुसंख्यक भारतीय रियासतों के एक ढेर म से, जिनके शासनों

तथा संघटनों की विविधता एक समस्या खड़ी कर रही है, एकीकरण और संघीकरण की प्रक्रिया से, एक जातीयता का विकास कर लिया गया है। अनेक रजवाड़े ब्रिटिश प्रभुता के अन्त के समय देश की एकता के लिये बलवान् बाधा प्रतीत हो रहे थे। परन्तु वे या तो अपने पड़ौसी प्रान्तों में विलीन हो गये, और या भारतीय संघ की संघटित इकाइयों के अंग बन गये। १९३५ के अधिनियम या ऐक्ट में वर्णित इण्डियन फेडरेशन के विपरीत जो तानाशाही और लोकतन्त्रता में गठबन्धन का प्रस्ताव करता था, नवीन लोकतान्त्रिक संविधान का भारतीय संघ, समान और अविरुद्ध इकाइयों के संघटन का सूचक है।

एककों का पुनर्वटन

नये राज्यों को संघ में प्रविष्ट और स्थापित करने तथा वर्तमान राज्यों की सीमाओं या नामों में परिवर्तन करने का अधिकार संसद् को अर्थात् केन्द्रिक विधानमण्डल को है। इस सम्बन्ध में राष्ट्रपति सम्बद्ध राज्यों में से प्रत्येक के विधानमण्डल या धारासभाओं के विचार निश्चित रूप से जान लेगा। जिस विधि या कानून द्वारा संघ की या राज्यों की सीमाओं में, क्षेत्रों या नामों में परिवर्तन किया जायगा, वह संविधान का संशोधन नहीं समझा जायेगा। इस उपबन्ध या व्यवस्था का प्रयोजन शासन के लिये बुद्धिसंगत एककों या इकाइयों की रचना में सहायता करना है।

संघ

भारतीय संविधान में संघ की सभी विशेषतायें हैं। उदाहरणार्थ: (१) इसका संविधान लिखित है, (२) राज्यों की और केन्द्र की शक्तियों का इसमें स्पष्ट विभाजन है, और (३) केन्द्र तथा संघटक एककों या इकाइयों के बीच विवादों का निवटारा करने के लिये सक्षम और स्वतन्त्र

संघ सरकार

राष्ट्रपति

उप-राष्ट्रपति

प्रधान मंत्री
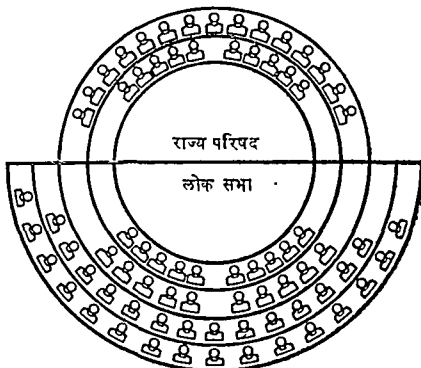
सर्वोच्च न्यायालय भी इसमें है । यह संविधान इन अर्थों में फेडरल है कि यह दो शासनों की स्थापना करता है, केन्द्र में संघ की और परिधि में राज्यों की, और उनमें से प्रत्येक को संविधान द्वारा निर्धारित क्षेत्र में सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न अधिकार प्राप्त हैं । प्रस्तुत संघ न तो राज्यों की लीग है, और न इसके राज्य ऐसी एजेन्सियां हैं जिनको शक्ति संघ से प्राप्त होती हो । इस दृष्टि से यह अमेरिकन, कैनेडियन और आस्ट्रेलियन संविधानों से मिलता है और ग्रेट ब्रिटेन के एकात्मक एक केन्द्रीय संविधान से भिन्न है ।

इसकी विशेषतायें

परन्तु भारतीय संघ अन्य संघों से अनेक महत्वपूर्ण दृष्टियों से भिन्न है । संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में नागरिकता दुहरी है; वहां प्रत्येक राज्य या स्टेट को प्राधिकार है कि वह अपने नागरिकों अथवा निवासियों को जो अधिकार दे, उन्हें अनिवासियों को न दे, या अधिक कठिन शर्तों पर दे । इसके विपरीत, भारतीय संविधान में शासन तो दो हैं, परन्तु नागरिकता एक ही है, राज्यों की नागरिकता पृथक् नहीं है । सब भारतीय, वे चाहें जहां निवास करें, विधि या क़ानून के समक्ष समान हैं । अमेरिका में राज्यों को अपने संविधान बनाने का प्राधिकार है । भारत में एकको या इकाइयों को यह प्राधिकार नहीं दिया गया । यहां एक ही संविधान सब पर लागू होता है, और सांविधानिक प्राधिकारी भी एक ही है । अनुच्छेद २३८ में रजवाड़ों से सम्बद्ध कुछ विशिष्ट परिस्थितियों और भारत सरकार के साथ हुये उनके करारों से उत्पन्न अवस्थाओं के विषय में उल्लिखित संक्रमण काल के अतिरिक्त, राज्यों का केन्द्र के साथ सांविधानिक सम्बन्ध और उनका आन्तरिक संघटन प्रान्तों के समान ही रहेगा ।

कुछ संघों में शासन दो होने के साथ ही विधानमण्डल, कार्यपालिका, न्यायपालिका और राज्याधीन नौकरियां भी दो हो जाती हैं । इस दुहरे-

विधायिनी शक्तियां

संघ सूची

९७ विषय

- प्रतिरक्षा
- स्थल सेना, जल सेना और वायु सेना
- अस्त्र-शस्त्र और गोली बारूद
- युद्ध और शान्ति
- आणविक शक्ति
- विदेशीय कार्य
- राजनयिक, वाणिज्य दूत सम्बन्धी और व्यापारिक प्रतिनिधित्व
- अंतर्राष्ट्रीय संधिपत्र और करार
- संयुक्त राष्ट्र संघ
- केन्द्रीय गुप्तचर विभाग का दफ्तर
- रेल विभाग
- राष्ट्रीय स्थल मार्ग
- पोत
- आलोक गृह (लाइट हाउस)
- प्रधान वन्दरगाह
- वायु मार्ग
- नागरिकता
- डाक और तार, वायरलैस और रेडियो प्रसार (ब्राडकास्टिंग)
- चल अर्थ (करन्सी), टंकण (कौइनेज) और विदेशीय विनिमय
- रिजर्व बैंक आफ इंडिया
- वैदेशिक व्यापार और बहिःशुल्क
- राज्यों का पारस्परिक व्यापार
- महाजनी
- वीमा
- श्रेष्ठि चत्वर (स्टाक एक्सचेंज)
- पेटेंट, आविष्कार तथा डिजाइन
- वजन तथा नाप के प्रामाणिक मानदंड
- तेल के कुएं
- खानें
- लवण
- अफीम
- सिनेमा के फिल्मों का प्रर्शदन
- प्राचीन मानुमेंट
- सर्वे आफ इंडिया और अंतरिक्ष विज्ञान सम्बन्धी संस्थायें
- जन गणना
- संघ की लोक सेवायें तथा संघ लोक सेवा आयोग
- आंकड़ा संग्रह

समवर्ती सूची

४७ विषय

दंड विधि
दंड विधि संहिता
विवाह और विवाह-विच्छेद
व्यवहार विधि संहिता
आर्थिक और सामाजिक योजना रचना
वाणिज्य सम्बन्धी तथा उद्योग धंधा सम्बन्धी एकाधिकार
मजदूर सभायें या कार्मिक संघ
सामाजिक सुरक्षा
श्रम कल्याण
पुनर्वास
जन्म मृत्यु सम्बन्धी आंकड़े जिन में मृत्यु का पंजीबद्ध किया जाना आता है
अप्रधान बन्दरगाह
दातव्य संस्थायें
कारखाने
विद्युत
समाचारपत्र, पुस्तक तथा छापेखाने

राज्य सूची

६६ विषय

पुलिस
सार्वजनिक व्यवस्था
न्याय का प्रशासन
जेलखाने
स्थानीय सरकार
सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा सफाई
शिक्षा
सड़कें
राज्य के अन्तर्गत व्यापार तथा वाणिज्य
कृषि
जल पहुंचाना
आबपाशी या सिंचाई
भूमि
जंगलात
मछली उद्योग
बाज़ार तथा मेले
मनोरंजन
गैस और गैस का धंधा

विधायिनी शक्तियां

संघ सूची

९७ विषय

प्रतिरक्षा

स्थल सेना, जल सेना और वायु सेना

अस्त्र-शस्त्र और गोली बारूद

युद्ध और शान्ति

आणविक शक्ति

विदेशीय कार्य

राजनयिक, वाणिज्य दूत सन्बन्धी और व्यापारिक प्रतिनिधित्व

अंतर्राष्ट्रीय संधिपत्र और करार

संयुक्त राष्ट्र संघ

केन्द्रीय गुप्तचर विभाग का दफ्तर

रेल विभाग

राष्ट्रीय स्थल मार्ग

पोत

आलोक गृह (लाइट हाउस)

प्रधान बन्दरगाह

वायु मार्ग

नागरिकता

डाक और तार, वायरलैस और रेडियो प्रसार (ब्राडकास्टिंग)

चल अर्थ (करन्सी), टंकण (कौइनेज) और विदेशीय विनिमय

रिजर्व बैंक आफ इंडिया

वैदेशिक व्यापार और बहि:शुल्क

राज्यों का पारस्परिक व्यापार

महाजनी

बीमा

श्रेष्ठि चत्वर (स्टाक एक्सचैंज)

पेटेंट, आविष्कार तथा डिजाइन

वजन तथा नाप के प्रामाणिक मानदंड

तेल के कुएं

खानें

लवण

अफीम

सिनेमा के फिल्मों का प्रर्शदन

प्राचीन मानुमेंट

सर्वे आफ इंडिया और अंतरिक्ष विज्ञान सम्बन्धी संस्थायें

जन गणना

संघ की लोक सेवायें तथा संघ लोक सेवा आयोग

आंकड़ा संग्रह

संविधान की समवर्ती सूची सैंतालीस विषयों की है । यह आस्ट्रेलियन नमूने पर बनायी गयी है, परन्तु उससे आगे बढ़ गयी है। संघीय शासन में कठोरता और विधिपरता या क़ानूनीपन की जो निर्बलतायें हुआ करती हैं, उनसे बचने के लिये संविधान ने संसद् को सतानवे विषयों पर एकमात्र शक्ति प्रदान की है । साधारण काल में भी केन्द्र का विधान सम्बन्धी प्राधिकार विस्तृत किया जा सकता है । संशोधन की प्रक्रिया को अपेक्षाकृत सरल रख कर इसे अधिक लचकदार बना दिया गया है ।

पन के कारण विधि या क़ानून, शासन और न्यायपालिका में विविधता होने लगती है। स्थानीय आवश्यकताओं और परिस्थितियों का सामना करने के लिये कुछ विविधता अभीष्ट भी हो सकती है, परन्तु एक बिन्दु के आगे वह घपलेबाज़ी का ही कारण बन जाती है। वर्तमान युग के संविधान को तो सब आधारभूत विषयों में समरूपता का ही उपबन्ध करना चाहिये। भारतीय संविधान में (१) एक न्यायपालिका, (२) मूलभूत व्यावहारिक (दीवानी) और आपराधिक (फौजदारी) विधियों या क़ानूनों की समानता और (३) अखिल भारतीय असैनिक नौकरियों की एकता द्वारा विधान और शासन में एकता रखी गयी है।

उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय एक सुसंगठित न्यायपालिका का निर्माण करते हैं। विविध सांविधानिक, व्यावहारिक और आपराधिक विधियों या क़ानूनों के अधीन चलने वाले अभियोगों पर उनका क्षेत्राधिकार रहेगा। व्यावहारिक और आपराधिक विधियों की संहितायें (कोड) समवर्ती सूची में सम्मिलित की गयी हैं। इस प्रकार संघीय पद्धति को हानि पहुंचाये बिना समानता का परिरक्षण हो गया है। अखिल भारतीय नौकरियों के व्यक्तियों की महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्ति द्वारा शासन में समानता सुनिश्चित हो गयी है। इसके अतिरिक्त संविधान ने केन्द्र को और राष्ट्रपति को राष्ट्रीय महत्त्व के सब कार्यों में नया पग उठाने के लिये पर्याप्त सुविधा दी है।

साधारणतया संघीय पद्धतियां कठोर होती हैं, लचकदार नहीं होतीं। उनमें परिवर्तन बहुधा असम्भव हो जाता है। परन्तु भारतीय संविधान संघता का एक निराला परीक्षण है। यह परिस्थिति के अनुसार एकात्मक और संघीय दोनों काम दे सकता है। साधारणतया इसे संघीय रहने के लिये ही बनाया गया है, परन्तु आपात या संकटकाल में यह एकात्मक रूप धारण कर सकता है।

संविधान की समवर्ती सूची सैंतालीस विषयों की है। यह आस्ट्रेलियन नमूने पर बनायी गयी है, परन्तु उससे आगे बढ़ गयी है। संघीय शासन में कठोरता और विधिपरता या क़ानूनीपन की जो निर्बलतायें हुआ करती हैं, उनसे बचने के लिये संविधान ने संसद् को सतानवे विषयों पर एकमात्र शक्ति प्रदान की है। साधारण काल में भी केन्द्र का विधान सम्बन्धी प्राधिकार विस्तृत किया जा सकता है। संशोधन की प्रक्रिया को अपेक्षाकृत सरल रख कर इसे अधिक लचकदार बना दिया गया है।

संघ और राज्यों के सम्वन्ध

वैधानिक सम्बन्ध

संविधान ने विधान रचना या क़ानून निर्माण के लिये विषयों की तीन सूचियां बनाई हैं: (१) संघ सूची, (२) राज्य सूची और (३) समवर्ती सूची। संघ और राज्यों के क्षेत्राधिकारों का और उनके परस्पर सम्वन्धों का उल्लेख स्पष्टता से कर दिया गया है। समवर्ती सूची के अन्तर्गत संघ जिन विधियों को अधिनियमित करेगा, उन्हें साधारणतया राज्यों के तद्विपयक विधानों की तुलना में प्राथमिकता प्राप्त रहेगी। कैनाडा की भांति, परन्तु अमेरिका के विपरीत, भारत में अवशिष्ट शक्तियां केन्द्र में निहित रहेंगी।

भाग (ग) में उल्लिखित राज्यों को छोड़ कर केन्द्र साधारणतया राज्य सूची में सम्मिलित विपयों पर विधान रचना नहीं करेगा। परन्तु

(१) यदि राज्य परिषद् सिफ़ारिश करे कि इस प्रकार की विधान रचना राष्ट्रीय हित के लिये आवश्यक है, (२) यदि दो अथवा अधिक राज्य परस्पर सहमत हो जायें कि उन राज्यों के लिये ऐसा किया जाना चाहिये, और (३) यदि सन्धियों या अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों या परम्पराओं की पूर्ति के लिये आवश्यकता हो तो संसद् वैसा कर सकती है।

प्रशासन विषयक सम्बन्ध

संविधान इस बात का यत्न करता है कि संघ और राज्यों के बीच सामंजस्य हो। राज्यों की कार्यपालिका को अपने प्राधिकारों का प्रयोग इस प्रकार करना चाहिये कि उनसे संघ के विधानों की पूर्ति अवश्य हो। केन्द्र किसी राज्य को राष्ट्रीय अथवा सैनिक महत्त्व के संचार साधनों का निर्माण और पोषण करने का निदेश भी दे सकता है।

किसी राज्य के शासन की सहमति से राष्ट्रपति किसी राज्य के पदाधिकारियों को साधारणतया उनके क्षेत्राधिकार से बाहर के विषयों में भी शक्ति प्रदान कर सकता अथवा कर्तव्यों का आदेश दे सकता है। इस प्रकार के मामलों में इन कर्तव्यों के पालन में जो अतिरिक्त व्यय होगा, वह केन्द्र को उठाना पड़ेगा।

राज्यों में सहयोग

राज्यों में परस्पर सहयोग रखने के लिये राष्ट्रपति को एक अन्तर्राज्य परिषद् की नियुक्ति का प्राधिकार दिया गया है। इस परिषद् के कर्तव्य ये हैं:

(क) राज्यों के पारस्परिक विवादों की जांच करना और उनके विषय में मंत्रणा देना और

संघ और राज्यों के सम्बन्ध

वैधानिक सम्बन्ध

संविधान ने विधान रचना या क़ानून निर्माण के लिये विषयों की तीन सूचियां बनाई हैं: (१) संघ सूची, (२) राज्य सूची और (३) समवर्ती सूची। संघ और राज्यों के क्षेत्राधिकारों का और उनके परस्पर सम्बन्धों का उल्लेख स्पष्टता से कर दिया गया है। समवर्ती सूची के अन्तर्गत संघ जिन विधियों को अधिनियमित करेगा, उन्हें साधारणतया राज्यों के तद्विषयक विधानों की तुलना में प्राथमिकता प्राप्त रहेगी। कैनाडा की भांति, परन्तु अमेरिका के विपरीत, भारत में अवशिष्ट शक्तियां केन्द्र में निहित रहेंगी।

भाग (ग) में उल्लिखित राज्यों को छोड़ कर केन्द्र साधारणतया राज्य सूची में सम्मिलित विषयों पर विधान रचना नहीं करेगा। परन्तु

(१) यदि राज्य परिषद् सिफ़ारिश करे कि इस प्रकार की विधान रचना राष्ट्रीय हित के लिये आवश्यक है, (२) यदि दो अथवा अधिक राज्य परस्पर सहमत हो जायें कि उन राज्यों के लिये ऐसा किया जाना चाहिये, और (३) यदि सन्धियों या अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों या परम्पराओं की पूर्ति के लिये आवश्यकता हो तो संसद् वैसा कर सकती है।

प्रशासन विषयक सम्बन्ध

संविधान इस बात का यत्न करता है कि संघ और राज्यों के बीच सामंजस्य हो। राज्यों की कार्यपालिका को अपने प्राधिकारों का प्रयोग इस प्रकार करना चाहिये कि उनसे संघ के विधानों की पूर्ति अवश्य हो। केन्द्र किसी राज्य को राष्ट्रीय अथवा सैनिक महत्त्व के संचार साधनों का निर्माण और पोषण करने का निदेश भी दे सकता है।

किसी राज्य के शासन की सहमति से राष्ट्रपति किसी राज्य के पदाधिकारियों को साधारणतया उनके क्षेत्राधिकार से बाहर के विषयों में भी शक्ति प्रदान कर सकता अथवा कर्तव्यों का आदेश दे सकता है। इस प्रकार के मामलों में इन कर्तव्यों के पालन में जो अतिरिक्त व्यय होगा, वह केन्द्र को उठाना पड़ेगा।

राज्यों में सहयोग

राज्यों में परस्पर सहयोग रखने के लिये राष्ट्रपति को एक अन्तर्राज्य परिषद् की नियुक्ति का प्राधिकार दिया गया है। इस परिषद् के कर्तव्य ये हैं :

(क) राज्यों के पारस्परिक विवादों की जांच करना और उनके विषय में मंत्रणा देना और

(ख) संघ तथा राज्यों के समान हितों की उन्नति के उपायों की खोज करना ।

वित्तीय सम्बन्ध

विभाजन से पूर्व प्रान्तों की आय के साधन सीमित थे। नवीन संविधान इस त्रुटि के निवारण का यत्न करता है। यह संघ और राज्यों में आय के साधनों के वितरण की एक योजना उपस्थित करता है। परन्तु इसने विस्तृत बटवारे का काम वित्त आयोग या कमीशन के लिये छोड़ दिया है, जिसकी नियुक्ति राष्ट्रपति दो वर्ष के भीतर कर देगा।

आपात शक्तियां

अन्य अनेक कठिन उत्तरदायित्वों के अतिरिक्त संघ शासन को (१) अपने शासन और विधान का दर्जा निदेशों के अनुसार ऊंचा उठाना पड़ेगा, (२) राज्यों के समाज सेवा के विविध कर्तव्यों और राष्ट्र निर्माण-कारी कार्यों की योजना बनानी पड़ेगी, और उनमें समन्वय रखना पड़ेगा, और (३) सब नागरिकों के लिये लोकतन्त्र के लाभ के समान रूपेण उपभोग की गारन्टी देनी पड़ेगी। प्रत्येक राज्य का वाह्य आक्रमण से संरक्षण करने के साथ ही उसे आन्तरिक प्रतिभूति या सुरक्षा की भी निश्चित व्यवस्था करनी होगी, जिससे प्रत्येक राज्य का शासन संविधान के उपबन्धों के अनुसार चल सके।

आपात काल में केन्द्र किसी भी राज्य के कार्यपालक प्राधिकार का प्रयोग करते हुये कोई भी निदेश जारी कर सकता है, और अपने विधान सम्बन्धी तथा कार्यपालन सम्बन्धी क्षेत्राधिकार विस्तृत करके राज्य सूची के समस्त क्षेत्र को अपने अधिकार में ले सकता है। राष्ट्रपति संघ

और राज्यों में आय के बंटवारे के उपबन्धों या व्यवस्थाओं में भी परिवर्तन कर सकता है ।

यदि किसी राज्य को शासन व्यवस्था भंग हो जाये, तो राष्ट्रपति घोषणा करके केन्द्र को उसका सम्पूर्ण अथवा अर्ध नियन्त्रण अपने हाथ में ले लेने का अधिकार दे सकता है ।

आपात के लिये किये गये उपबन्धों या व्यवस्थाओं का महत्व खोल कर बतलाने की आवश्यकता नहीं । साधारण काल में ये उपबन्ध लागू न होंगे ।

कार्यपालिका

संसद् द्वारा शासन

भारतीय संविधान में संसद् द्वारा शासन का उपवन्ध या व्यवस्था है। फलतः कार्यपालिका अपने सब कर्तव्यों, निर्णयों और कामों के लिये, व्यक्तिशः तथा समष्टिशः विधानमण्डल अर्थात् धारासभाओं के प्रति उत्तरदायी है। विधानमंडल, कार्यपालिका का नियन्त्रण अपने विधान निर्माण सम्बन्धी प्राधिकार द्वारा और कोष के नियन्त्रण द्वारा करता है। साधारण निर्वाचन के समय जनता को नयी संसद् चुन लेने का अवसर मिल जाता है।

शासन की यह पद्धति संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की पद्धति से मूलतः भिन्न है। वहां राष्ट्रपति ही वास्तविक कार्यपालिका है, और मंत्रि परिषद उसकी छाया मात्र है। परन्तु भारतीय संविधान के अनुसार, राष्ट्र-

पति का स्थान वही है जो ब्रिटिश संविधान में राजा का है। वह राज्य का प्रमुख है, कार्यपालिका का नहीं। वह राष्ट्र का प्रतिनिधि है, परन्तु राष्ट्र पर शासन नहीं करता। शासन में उसका स्थान, किसी मुहर पर बने हुये आलंकारिक चित्र के समान है, जिसके द्वारा राष्ट्र के निर्णय प्रकट किये जाते हैं।

राष्ट्रपति का चुनाव

राष्ट्रपति का निर्वाचन परोक्ष विधि से एक निर्वाचकगण द्वारा होगा जो राज्यों के विधानमण्डलों और संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्यों से मिलकर बनेगा। निर्वाचन अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल सक्रमणीय मत द्वारा होगा। * राष्ट्रपति नाममात्र का

---

* निर्वाचन की एकल संक्रमणीय मत द्वारा अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति अथवा प्रोपोर्शनल रिप्रेजेन्टेशन वाइ सिंगल ट्रान्सफेरेवल वोट यह है कि जितने व्यक्ति निर्वाचित करने होते हैं, उनकी संख्या से निर्वाचकों की संख्या को भाग दे दिया जाता है। जितना भागफल आवे, उतने मत जिस अभ्यर्थी या उम्मीदवार को मिल जायेंगे, वह निर्वाचित समझा जायेगा। उदाहरणार्थ, यदि १०० निर्वाचकों को १० प्रतिनिधि चुनने हों तो प्रत्येक प्रतिनिधि को १० मत प्राप्त करने पड़ेंगे। प्रत्येक निर्वाचक अपने मतपत्र में दस उम्मीदवारों का नाम अपनी पसन्द के क्रम से लिख देगा, अर्थात् उसकी पसन्द में पहला नम्बर किसको, दूसरा किसको, तीसरा किसको मिलना चाहिये इत्यादि लिखेगा। इस प्रकार मत गणना में जिन अभ्यर्थियों या उम्मीदवारों को दस निर्वाचकों ने अपनी पसन्द में प्रथम स्थान दिया होगा, वे निर्वाचित मान लिये जायेंगे। जिन निर्वाचकों का मत इस प्रकार निर्वाचित अभ्यर्थियों के निर्वाचन में काम नहीं आवेगा, उनके मतपत्रों में छांटा जायेगा कि नम्बर दो की पसन्द पर किस किस अभ्यर्थी का नाम लिखा गया है। इस प्रकार जिनको दस-दस मत मिल

कार्यपालिका

संसद् द्वारा शासन

भारतीय संविधान में संसद् द्वारा शासन का उपबन्ध या व्यवस्था है। फलतः कार्यपालिका अपने सब कर्तव्यों, निर्णयों और कामों के लिये, व्यक्तिशः तथा समष्टिशः विधानमण्डल अर्थात् धारासभाओं के प्रति उत्तरदायी है। विधानमंडल, कार्यपालिका का नियन्त्रण अपने विधान निर्माण सम्बन्धी प्राधिकार द्वारा और कोष के नियन्त्रण द्वारा करता है। साधारण निर्वाचन के समय जनता को नयी संसद् चुन लेने का अवसर मिल जाता है।

शासन की यह पद्धति संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की पद्धति से मूलतः भिन्न है। वहां राष्ट्रपति ही वास्तविक कार्यपालिका है, और मंत्रि परिषद उसकी छाया मात्र है। परन्तु भारतीय संविधान के अनुसार, राष्ट्र-

पति का स्थान वही है जो ब्रिटिश संविधान में राजा का है। वह राज्य का प्रमुख है, कार्यपालिका का नहीं। वह राष्ट्र का प्रतिनिधि है, परन्तु राष्ट्र पर शासन नहीं करता। शासन में उसका स्थान, किसी मुहर पर बने हुये आलंकारिक चित्र के समान है, जिसके द्वारा राष्ट्र के निर्णय प्रकट किये जाते हैं।

राष्ट्रपति का चुनाव

राष्ट्रपति का निर्वाचन परोक्ष विधि से एक निर्वाचकगण द्वारा होगा जो राज्यों के विधानमण्डलों और संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्यों से मिलकर बनेगा। निर्वाचन अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल सक्रमणीय मत द्वारा होगा। * राष्ट्रपति नाममात्र का

---

* निर्वाचन की एकल संक्रमणीय मत द्वारा अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति अथवा प्रोपोर्शनल रिप्रेजेन्टेशन बाइ सिंगल ट्रान्सफेरेबल वोट यह है कि जितने व्यक्ति निर्वाचित करने होते हैं, उनकी संख्या से निर्वाचकों की संख्या को भाग दे दिया जाता है। जितना भागफल आवे, उतने मत जिस अभ्यर्थी या उम्मीदवार को मिल जायेंगे, वह निर्वाचित समझा जायेगा। उदाहरणार्थ, यदि १०० निर्वाचकों को १० प्रतिनिधि चुनने हों तो प्रत्येक प्रतिनिधि को १० मत प्राप्त करने पड़ेंगे। प्रत्येक निर्वाचक अपने मतपत्र में दस उम्मीदवारों का नाम अपनी पसन्द के क्रम से लिख देगा, अर्थात् उसकी पसन्द में पहला नम्बर किसको, दूसरा किसको, तीसरा किसको मिलना चाहिये इत्यादि लिखेगा। इस प्रकार मत गणना में जिन अभ्यर्थियों या उम्मीदवारों को दस निर्वाचकों ने अपनी पसन्द में प्रथम स्थान दिया होगा, वे निर्वाचित मान लिये जायेंगे। जिन निर्वाचकों का मत इस प्रकार निर्वाचित अभ्यर्थियों के निर्वाचन में काम नहीं आवेगा, उनके मतपत्रों में छांटा जायेगा कि नम्बर दो की पसन्द पर किस किस अभ्यर्थी का नाम लिखा गया है। इस प्रकार जिनको दस-दस मत मिल

कार्यपालिका

संसद् द्वारा शासन

भारतीय संविधान में संसद् द्वारा शासन का उपबन्ध या व्यवस्था है। फलतः कार्यपालिका अपने सब कर्तव्यों, निर्णयों और कामों के लिये, व्यक्तिशः तथा समष्टिशः विधानमण्डल अर्थात् धारासभाओं के प्रति उत्तरदायी है। विधानमंडल, कार्यपालिका का नियन्त्रण अपने विधान निर्माण सम्बन्धी प्राधिकार द्वारा और कोष के नियन्त्रण द्वारा करता है। साधारण निर्वाचन के समय जनता को नयी संसद् चुन लेने का अवसर मिल जाता है।

शासन की यह पद्धति संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की पद्धति से मूलतः भिन्न है। वहां राष्ट्रपति ही वास्तविक कार्यपालिका है, और मंत्रि परिषद उसकी छाया मात्र है। परन्तु भारतीय संविधान के अनुसार, राष्ट्र-

पति का स्थान वही है जो ब्रिटिश संविधान में राजा का है। वह राज्य का प्रमुख है, कार्यपालिका का नहीं। वह राष्ट्र का प्रतिनिधि है, परन्तु राष्ट्र पर शासन नहीं करता। शासन में उसका स्थान, किसी मुहर पर बने हुये आलंकारिक चित्र के समान है, जिसके द्वारा राष्ट्र के निर्णय प्रकट किये जाते हैं।

राष्ट्रपति का चुनाव

राष्ट्रपति का निर्वाचन परोक्ष विधि से एक निर्वाचकगण द्वारा होगा जो राज्यों के विधानमण्डलों और संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्यों से मिलकर बनेगा। निर्वाचन अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल सक्रमणीय मत द्वारा होगा। ⊛ राष्ट्रपति नाममात्र का

⊛ निर्वाचन की एकल संक्रमणीय मत द्वारा अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति अथवा प्रोपोर्शनल रिप्रेजेन्टेशन बाइ सिंगल ट्रान्सफेरेबल वोट यह है कि जितने व्यक्ति निर्वाचित करने होते हैं, उनकी संख्या से निर्वाचकों की संख्या को भाग दे दिया जाता है। जितना भागफल आवे, उतने मत जिस अभ्यर्थी या उम्मीदवार को मिल जायेंगे, वह निर्वाचित समझा जायेगा। उदाहरणार्थ, यदि १०० निर्वाचकों को १० प्रतिनिधि चुनने हों तो प्रत्येक प्रतिनिधि को १० मत प्राप्त करने पड़ेंगे। प्रत्येक निर्वाचक अपने मतपत्र में दस उम्मीदवारों का नाम अपनी पसन्द के क्रम से लिख देगा, अर्थात् उसकी पसन्द में पहला नम्बर किसको, दूसरा किसको, तीसरा किसको मिलना चाहिये इत्यादि लिखेगा। इस प्रकार मत गणना में जिन अभ्यर्थियों या उम्मीदवारों को दस निर्वाचकों ने अपनी पसन्द में प्रथम स्थान दिया होगा, वे निर्वाचित मान लिये जायेंगे। जिन निर्वाचकों का मत इस प्रकार निर्वाचित अभ्यर्थियों के निर्वाचन में काम नहीं आवेगा, उनके मतपत्रों में छांटा जायेगा कि नम्बर दो की पसन्द पर किस किस अभ्यर्थी का नाम लिखा गया ह। इस प्रकार जिनको दस-दस मत मिल

प्रमुख होने के कारण, उसका प्रत्यक्ष निर्वाचन करना अनावश्यक समझा गया। इसके अतिरिक्त, समस्त वयस्क मतदाताओं के लिये उपयुक्त निर्वाचन व्यवस्था कर सकना कठिन भी है।

राष्ट्रपति के निर्वाचन में किसी राज्य के विधानमण्डल का कोई सदस्य कितने मत देने का हक़दार होगा, इसका निर्धारण जिस रीति से किया जायेगा, वह संविधान में दिये गये निम्न उदाहरण से स्पष्ट हो जायेगी।

बम्बई की जनसंख्या २,०८,४६,८४० है। हम बम्बई की विधानसभा में निर्वाचित सदस्यों की संख्या २०८ अर्थात् जनसंख्या के प्रति एक लाख पर एक प्रतिनिधि मान लेते हैं। इस प्रकार निर्वाचित प्रत्येक सदस्य जितने मत देने का हक़दार होगा उनकी संख्या प्राप्त करने के लिये हमें पहले २,०८,४६,८४० (जनसंख्या) को २०८ (निर्वाचित सदस्यों की संख्या) से भाग देना पड़ेगा, और फिर भागफल को १००० से भाग देना होगा। इस उदाहरण में भागफल १,००,२३६ आया। अब प्रत्येक निर्वाचित सदस्य को १,००,२३६÷१००० अर्थात् १०० मत देने का हक़ होगा (शेष २३६ को छोड़ दिया है, क्योंकि वह ५०० से कम था)।

संसद अर्थात् केन्द्रिक विधानमण्डल के दोनों सदनों का प्रत्येक सदस्य जितने मत देने का हक़दार होगा उनकी संख्या, राज्यों के विधानमण्डलों या धारासभाओं के सब निर्वाचित सदस्यों द्वारा दिये जाने वाले मतों की समस्त संख्या को संसद् के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्यों की संख्या से भाग देने से प्राप्त होगी।

जायेंगे, वे भी निर्वाचित मान लिये जायेंगे। यही क्रम आगे चलता रहेगा। इस पद्धति में निर्वाचक का मत संक्रमित होता जाता है और निर्वाचितों को केवल सब निर्वाचकों की संख्या के अनुपात से मत प्राप्त करने होते हैं, इस लिये इसका नाम एकल संक्रमणीय मत द्वारा अनुपाती प्रतिनिधित्व रखा गया है।

चुनाव
राष्ट्रपति
अपने पद पर पांच वर्ष तक रहता है और पुनर्निर्वाचित हो सकता है
संघ की समस्त कार्यपालिका (एक्जेक्यूटिव) शक्ति उसमें निहित है,
प्रतिरक्षा बलों (सेनाओं) का सर्वोच्च समादेष्टा (कमान्डर) है,
कुछ अवस्थाओं में दंड को क्षमा अथवा परिहृत कर सकता और दण्डादेश को लघु कर सकता है।
राज्यपालों, राजदूतों, उच्चतम तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों और लोकसेवा आयोगों के सभापति तथा सदस्यों आदि की नियुक्ति करता है।
संसद जब न बैठ रही हो, तब अध्यादेश प्रख्यापित कर सकता है, और युद्ध आन्तरिक उपद्रव और आर्थिक अस्थिरता के कारण आपात अवस्था की घोषणा करता है।
चुनता है
चुनता है
राज्य परिषदों के चुने हुए सदस्य
संघ की संसद के चुने हुए सदस्य
संयुक्त रूप से चुनती है
उपराष्ट्रपति
चुनती है
चुनती है
जनता

अर्हता

राष्ट्रपति पद पर निर्वाचित होने के अभ्यर्थी या उम्मीदवार की अर्हतायें या योग्यतायें ये है : (१) वह भारत का नागरिक हो, (२) पैंतीस वर्ष से अधिक आयु का हो, और (३) लोकसभा का सदस्य निर्वाचित होने का पात्र हो। कोई सरकारी सेवक राष्ट्रपति के पद के लिये पात्र नही होगा।

पद की अवधि

यदि उसने पहिले ही त्यागपत्र न दिया अथवा महाभियोग द्वारा पृथक् न कर दिया गया, तो राष्ट्रपति के पद की अवधि पांच वर्ष होगी। राष्ट्रपति पुनर्निर्वाचन का पात्र होगा। राष्ट्रपति का एक सरकारी निवास स्थान या पदावास होगा, और उसका मासिक वेतन १०,००० रु० प्रति मास होगा। उसकी पदावधि में उसका वेतन घटाया नही जायेगा। वह उन्हीं विशेषाधिकारों और भत्तों का हक़दार होगा जिनका २६ जनवरी १९५० से पूर्व गवर्नर जनरल हक़दार था।

संरक्षण

भारतीय गणराज्य के राष्ट्रपति का सम्मानित पद उच्च प्रतिष्ठा और विधि सम्बन्धी या विशेषाधिकारों से युक्त है। महाभियोग के अतिरिक्त, राष्ट्रपति अपने पद की शक्तियों का प्रयोग और कर्तव्यों का पालन करते हुये, किसी न्यायालय के प्रति उत्तरदायी न होगा। उसकी पदावधि में उसके विरुद्ध कोई आपराधिक या फौजदारी कार्रवाई नहीं की जा सकती, और उनसे व्यक्तिगत अनुतोष या रिलीफ का दावा करने के लिये उसके विरुद्ध लिखित सूचना देने के पश्चात् दो मास बीतने से पूर्व कोई व्यावहारिक या दीवानी कार्रवाई नही की जा सकती।

महाभियोग

भारतीय संविधान में राष्ट्रपति पर संविधान का अतिक्रमण या भंग करने के लिये महाभियोग लगाने का उपबन्ध या व्यवस्था भी है। उक्त आशय का प्रस्ताव संसद् के दोनों भवनों में रखा जा सकता है, परन्तु उसका संकल्प के रूप में दो तिहाई बहुमत से पारित या पास होना आवश्यक है। उस प्रस्ताव के लिये सदन के कम से कम एक चौथाई सदस्यों के हस्ताक्षरों से युक्त सूचना चौदह दिन पूर्व दी जानी आवश्यक है, परन्तु दोपारोपण का अनुसंधान उसे लगाने वाले सदन से भिन्न दूसरा सदन करेगा। यदि अनुसंधान के फलस्वरूप संकल्प इस रूप में पारित या पास हो जायेगा कि अभियोग प्रमाणित हो गये, तो राष्ट्रपति तुरन्त अपने पद से पृथक् हुआ समझा जायेगा।

शक्तियां

संविधान ने संघ की कार्यपालिका के सब प्राधिकार राष्ट्रपति में निहित किये हैं। रक्षा-बलों अर्थात् सेनाओं का सर्वोच्च समादेश भी उसी में निहित होगा। उसे कुछ अभियोगों में दण्ड क्षमा कर देने अथवा उसका परिहार कर देने की अथवा दण्डादेश के लघुकरण की भी शक्ति होगी। राज्यपालों, राजदूतों, सर्वोच्च तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों संघीय लोकसेवा आयोग या कमीशन के सभापति तथा सदस्यों, भारत के महान्यायवादी या ऐटर्नी जनरल और भारत के नियंत्रक महालेखा परीक्षक आदि की महत्त्वपूर्ण नियुक्तियां राष्ट्रपति ही करेगा। वह निर्वाचन और वित्त आयोगों की तथा अन्य उन आयोगों या कमीशनों की नियुक्ति करेगा, जो राज्येतर क्षेत्र के प्रशासन पर प्रतिवेदन या रिपोर्ट करेंगे, और शिक्षा तथा सामाजिक दृष्टि से अनुन्नत वर्गों की अवस्था का अनुसंधान करेंगे।

अर्हता

राष्ट्रपति पद पर निर्वाचित होने के अभ्यर्थी या उम्मीदवार की अर्हतायें या योग्यतायें ये हैं : (१) वह भारत का नागरिक हो, (२) पैंतीस वर्ष से अधिक आयु का हो, और (३) लोकसभा का सदस्य निर्वाचित होने का पात्र हो। कोई सरकारी सेवक राष्ट्रपति के पद के लिये पात्र नही होगा।

पद की अवधि

यदि उसने पहिले ही त्यागपत्र न दिया अथवा महाभियोग द्वारा पृथक् न कर दिया गया, तो राष्ट्रपति के पद की अवधि पांच वर्ष होगी। राष्ट्रपति पुनर्निर्वाचन का पात्र होगा। राष्ट्रपति का एक सरकारी निवास स्थान या पदावास होगा, और उसका मासिक वेतन १०,००० रु० प्रति मास होगा। उसकी पदावधि में उसका वेतन घटाया नही जायेगा। वह उन्ही विशेषाधिकारों और भत्तों का हकदार होगा जिनका २६ जनवरी १९५० में पूर्व गवर्नर जनरल हकदार था।

संरक्षण

भारतीय गणराज्य के राष्ट्रपति का सम्मानित पद उच्च प्रतिष्ठा और विधि सम्बन्धी या विशेषाधिकारों से युक्त है। महाभियोग के अतिरिक्त, राष्ट्रपति अपने पद की शक्तियों का प्रयोग और कर्तव्यों का पालन करते हुये, किसी न्यायालय के प्रति उत्तरदायी न होगा। उसकी पदावधि में उसके विरुद्ध कोई आपराधिक या फौजदारी कार्रवाई नही की जा सकती, और उससे व्यक्तिगत अनुतोष या रिलीफ का दावा करने के लिये उसके विरुद्ध लिखित सूचना देने के पश्चात् दो मास बीतने से पूर्व कोई व्यावहारिक या दीवानी कार्रवाई नही की जा सकती।

महाभियोग

भारतीय संविधान में राष्ट्रपति पर संविधान का अतिक्रमण या भंग करने के लिये महाभियोग लगाने का उपबन्ध या व्यवस्था भी है। उक्त आशय का प्रस्ताव संसद् के दोनों भवनों में रखा जा सकता है, परन्तु उसका संकल्प के रूप में दो तिहाई बहुमत से पारित या पास होना आवश्यक है। उस प्रस्ताव के लिये सदन के कम से कम एक चौथाई सदस्यों के हस्ताक्षरों से युक्त सूचना चौदह दिन पूर्व दी जानी आवश्यक है, परन्तु दोपारोपण का अनुसंधान उसे लगाने वाले सदन से भिन्न दूसरा सदन करेगा। यदि अनुसंधान के फलस्वरूप संकल्प इस रूप में पारित या पास हो जायेगा कि अभियोग प्रमाणित हो गये, तो राष्ट्रपति तुरन्त अपने पद से पृथक् हुआ समझा जायेगा।

शक्तियां

संविधान ने संघ की कार्यपालिका के सब प्राधिकार राष्ट्रपति में निहित किये हैं। रक्षा-बलों अर्थात् सेनाओं का सर्वोच्च समादेश भी उसी में निहित होगा। उसे कुछ अभियोगों में दण्ड क्षमा कर देने अथवा उसका परिहार कर देने की अथवा दण्डादेश के लघुकरण की भी शक्ति होगी। राज्यपालों, राजदूतों, सर्वोच्च तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों संघीय लोकसेवा आयोग या कमीशन के सभापति तथा सदस्यों, भारत के महान्यायवादी या ऐटर्नी जनरल और भारत के नियंत्रक महालेखा परीक्षक आदि की महत्त्वपूर्ण नियुक्तियां राष्ट्रपति ही करेगा। वह निर्वाचन और वित्त आयोगों की तथा अन्य उन आयोगों या कमीशनों की नियुक्ति करेगा, जो राज्येतर क्षेत्र के प्रशासन पर प्रतिवेदन या रिपोर्ट करेंगे, और शिक्षा तथा सामाजिक दृष्टि से अनुन्नत वर्गों की अवस्था का अनुसंधान करेंगे।

राष्ट्रपति के विधान सम्बन्धी प्राधिकार की सीमा इतनी ही है कि वह तब अध्यादेश (आर्डिनेन्स) जारी कर सकता है, जब कि संसद् की बैठक न हो रही हो। वह अनुसूचित क्षेत्रों में शान्ति और सुशासन के लिये विनियम (रेगुलेशन) बना सकता है। वह विधेयकों या बिलों को पुनर्विचार के लिये संसद् में भेज सकता है, लोकसभा का विघटन कर सकता है, दोनों सदनों का समवेत अधिवेशन बुला सकता है, और उन दोनों अथवा उनमें से एक को सम्बोधित कर सकता या सन्देश भेज सकता है। राष्ट्रपति की सिफ़ारिश बिना न कोई धन अनुदत्त होगा या दिया जायेगा और न कोई धन सम्बन्धी विधेयक या बिल पुरःस्थापित या पेश किया जायेगा।

आपात शक्तियां

जर्मनी के वाइमर संविधान की भांति, भारतीय संविधान भी आपात काल में राष्ट्रपति को व्यापक शक्तियां प्रदान करता है। यह तीन प्रकार के आपातों की कल्पना करता है, और तदनुसार राष्ट्रपति तीन प्रकार के प्रख्यापन (प्रामलगेशन) कर सकता है।

युद्ध अथवा आन्तरिक उपद्रवों के कारण उत्पन्न आपात

यदि युद्ध अथवा बाह्य आक्रमण अथवा आभ्यन्तरिक उपद्रवों के कारण कोई ऐसा आपात उपस्थित हो जाये कि उससे भारत को या उसके राज्यक्षेत्र के किसी भाग की सुरक्षा को संकट हो, तो राष्ट्रपति आपात की उद्घोषणा कर सकता है। कभी कभी यह उद्घोषणा युद्ध अथवा आक्रमण या आभ्यन्तरिक अशान्ति की सम्भावना से भी की जा सकती है।

परन्तु राष्ट्रपति का प्राधिकार सदा संसद् के प्राधिकार के अधीन रहेगा। उक्त उद्घोषणा संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जायेगी। यह दो मास की समाप्ति पर प्रवर्तन में या प्रवृत्त नहीं रहेगी, जब तक कि

संसद के दोनों सदन उक्त कालावधि से पूर्व अन्यथा निर्णय न कर दें। आपात काल में केन्द्र राज्य की विधायिनी या कानून बनाने की शक्ति को अपने हाथ में लेकर उस राज्य के क्षेत्र में उसका प्रयोग कर सकेगा। राष्ट्रपति आपात काल की कुछ अथवा पूरी कालावधि तक मौलिक अधिकारों को प्रभावी करने के लिये न्यायालयों की शरण में जाने के व्यक्तियों के अधिकार का प्रयोग स्थगित कर सकेगा। उसी समय राष्ट्रपति को अधिकार होगा कि उस वित्तीय वर्ष में देश के राजस्व के साधारण वितरण को परिवर्तित कर दे।

राज्यों में सांविधानिक तन्त्र की विफलता

यदि प्राप्त प्रतिवेदनों या रिपोर्टों के आधार पर या अन्य सूत्रों से राष्ट्रपति का समाधान हो जाय कि किसी राज्य का शासन संविधान के उपबन्धों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता, तो वह इस आशय की उद्-घोषणा कर सकता है। तब वह राज्यपाल या गवर्नर अथवा राजप्रमुख की शक्तियों सहित राज्य के शासन के सब कृत्य अपने हाथ में ले सकता है। वह राज्य के विधान मण्डल या धारासभाओं की सब शक्तियों के प्रयोग का अधिकार संसद् को दे सकता है। वह राज्य के किसी निकाय या प्राधिकार से सम्बद्ध संविधान के किसी भाग को स्थगित कर सकता है। एकमात्र अपवाद यह है कि वह उच्च न्यायालय में निहित अथवा उस द्वारा प्रयुक्त होने वाली शक्ति को अपने हाथ में नहीं ले सकता। न वह उक्त न्यायालय से सम्बद्ध किसी सांविधानिक उपबन्ध या व्यवस्था के प्रवर्तन को स्थगित कर सकता है।

संसद चाहे तो राज्य के लिये विधि या क़ानून बनाने की शक्ति राष्ट्र-पति को दे सकती है, और साथ ही वह राष्ट्रपति को यह प्राधिकार दे सकती है कि राष्ट्रपति अपने द्वारा उल्लिखित किसी अन्य प्राधिकारी

को यह शक्ति प्रदान करे। परन्तु जब संसद के दोनों सदनों का अधिवेशन हो रहा हो, तब राष्ट्रपति राज्य के लिये अध्यादेश (आर्डिनेन्स) प्रख्यापित नहीं कर सकता। यदि लोक सभा का अधिवेशन न हो रहा हो, तो राष्ट्रपति राज्य की संचित निधि में से संसद् द्वारा इस सम्बन्ध में कार्रवाई की जाने तक व्यय को प्राधिकृत कर सकता है।

वित्तीय आपात

यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाय कि ऐसी स्थिति पैदा हो गयी है जिससे भारत अथवा उसके राज्य क्षेत्र के किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय या साख संकट में है, तो वह वित्तीय आपात की उद्घोषणा कर सकता है। इस दशा में वह आवश्यक निर्देश जारी कर सकता है, जिनमें संघ अथवा राज्यों के लोकसेवकों के वेतनों और भत्तों में कमी के निदेश भी सम्मिलित हैं और साथ ही वह निदेश भी दे सकता है कि सब अर्थ विधेयक भी उसके पास स्वीकृति के लिये भेजे जायें। राज्यों के विधान-मण्डलों या धारासभाओं द्वारा पारित या पास सब धन विधेयक या अर्थ बिल भी राष्ट्रपति के विचार के अधीन रहेंगे।

अन्तिम दोनों अवस्थाओं में आपात की कालावधि और प्रक्रिया वही होगी जो प्रथम उद्घोषणा में, परन्तु द्वितीय अवस्था में प्रति छः मास के पश्चात् उद्घोषणा के विस्तार की अनुमति संसद् से लेना आवश्यक होगा और यह विस्तार तीन वर्षों से अधिक न हो सकेगा। यद्यपि राष्ट्र-पति को ये सब आपात्कालीन शक्तियां प्राप्त हैं, तथापि वह इनका प्रयोग मन-माने ढंग पर नहीं करेगा। वह गणराज्य का प्रमुख अपने पदमात्र से है। कार्यपालिका के वास्तविक प्रमुख प्रधानमन्त्री और मन्त्रिपरिषद् हैं, अर्थात् शासनतन्त्र का साधन मन्त्रियों की परिषद् है। भारतीय संविधान मन्त्रिपरिषद् के नेतृत्व तथा सामूहिकता को निश्चित करके, उसके कार्यों का नियन्त्रण संसद्, न्यायालयों और जनता को सौंपता है।

यद्यपि ऊपर लिखे अनुसार ऐसा कोई उपबन्ध या व्यवस्था नहीं है कि राष्ट्रपति को मन्त्रियों की मन्त्रणा माननी ही चाहिये, परन्तु सम्भवतः राष्ट्रपति और मन्त्रिपरिषद् के सम्बन्ध अभिसमय या परम्परा द्वारा शासित होंगे। इस सम्बन्ध में भारतीय संविधान ब्रिटिश प्रक्रिया का अनुसरण करेगा।

उपराष्ट्रपति

संविधान एक उपराष्ट्रपति का भी उपबन्ध करता है, जो पदेन राज्य परिषद् का सभापति होगा। इस सम्बन्ध में उसका पद संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के उपराष्ट्रपति से मिलता है। यदि राष्ट्रपति रोगी हो, त्याग पत्र दे दे, मर जाय, पृथक् हो जाय या किसी कारण अनुपस्थित हो, तो उपराष्ट्रपति राष्ट्रपति का काम करेगा। परन्तु अमेरिकन उपराष्ट्रपति की भांति, वह राष्ट्रपति के त्यागपत्र दे देने या मर जाने पर आपसे आप राष्ट्रपति नहीं बनेगा।

निर्वाचन

उपराष्ट्रपति का निर्वाचन संसद् के दोनों सदनों की समवेत बैठक में अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा होगा। पैंतीस वर्ष से अधिक आयु का कोई भी भारतीय नागरिक यदि वह राज्य परिषद् का सदस्य होने की अर्हता अर्थात् योग्यता रखता हो, इस पद का पात्र हो सकता है। उपराष्ट्रपति को उसके पद से राज्य परिषद् के ऐसे संकल्प द्वारा पृथक किया जा सकता है जो लोक सभा द्वारा भी अनुमत हो।

मंत्रियों की परिषद्

संविधान के अनुसार, राष्ट्रपति को उसके कृत्यों के सम्पादन में सहा-

मन्त्रिमंडल

राष्ट्रपति
नियुक्त करता है

प्रधान मंत्री

चुनता है

मन्त्रिमंडल

संयुक्त रूप से उत्तरदायी है
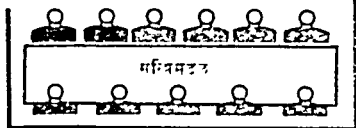
संसद के प्रति
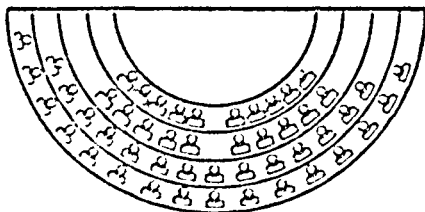
यता तथा मन्त्रणा देने के लिये एक मन्त्रिपरिषद् होगी जिसका प्रधान प्रधानमन्त्री होगा। प्रधानमन्त्री का नेतृत्व स्पष्टतया स्वीकृत कर लिया गया है। प्रधानमन्त्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करेगा, परन्तु अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति वह प्रधानमन्त्री की मन्त्रणा से करेगा। प्रधानमन्त्री मन्त्रिपरिषद् और राष्ट्रपति के मध्य कड़ी का काम देगा। वह मन्त्रिपरिषद् के सब निर्णयों को राष्ट्रपति तक पहुंचावेगा और उसे वह सब जानकारी देगा जो वह प्राप्त करना चाहे।

मन्त्री अपने पदों पर राष्ट्रपति के प्रसाद या उसकी इच्छा की अवधि पर्यन्त रहेंगे। परन्तु इस उपबन्ध के साथ एक अन्य उपबन्ध जुड़ा हुआ है कि उनका उत्तरदायित्व लोकसभा के प्रति सामूहिक होगा। इसका अर्थ यह है कि किसी भी मन्त्री को दो कारणों से पृथक् किया जा सकेगा, विश्वास का अभाव और प्रशासन की अपवित्रता। मन्त्रियों को अपने पद की और गोपनीयता की शपथ लेनी होगी और वे वही वेतन पाने के अधिकारी होंगे जो २६ जनवरी १९५० से पूर्व उन्हें मिलता था।

नवीन संसद

भारतीय संविधान की एक प्रमुख विशेषता वयस्क अर्थात् बालिग मताधिकार है। इसमें लिखा है कि लोकसभा का निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा; अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति जो इक्कीस वर्ष की अवस्था से कम नहीं है, तथा इस संविधान अथवा समुचित विधान-मण्डल द्वारा निर्मित किसी विधि के अधीन अनिवास, चित्त-विकृति, अपराध अथवा भ्रष्ट या अवैध (खिलाफ कानून) आचरण के आधार पर अनर्ह नहीं कर दिया गया है, ऐसे किसी निर्वाचन में मतदाता के रूप में पंजीबद्ध होने का हकदार होगा। इस उपबन्ध को कई व्यक्तियों ने लोकतन्त्र का मूल स्रोत कहा है, क्योंकि यह भारत के प्रत्येक स्त्री अथवा पुरुष वयस्क को शासन में भाग लेने का अधिकार देता है।

डा० राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था "हमने वयस्क मताधिकार का उपबन्ध

किया है, जिसके द्वारा प्रान्तों की विधानसभायें और केन्द्र की लोकसभा निर्वाचित होंगी। हमने यह बहुत बड़ा क़दम उठाया है। यह न केवल इस कारण बड़ा है कि हमारा वर्तमान निर्वाचकमण्डल अपेक्षाकृत बहुत छोटा है, और उसका आधार बहुत कुछ साम्पत्तिक योग्यता है, प्रत्युत यह इस कारण भी बड़ा है कि इसमें भारी संख्याओं से वास्ता पड़ेगा। इस समय हमारी जनसंख्या अधिक नहीं तो ३२ करोड़ के आसपास है, और प्रान्तों में निर्वाचकों की जो नामावलियां तैयार हो रही हैं, उनमें प्राप्त अनुभव से हम ने देख लिया है कि मोटे हिसाब से आबादी के पचास प्रतिशत लोग वयस्क हैं, और इस आधार पर हमारी निर्वाचक नामावली में १६ करोड़ से कम निर्वाचक नहीं होंगे। इतनी बड़ी संख्या द्वारा निर्वाचन को संगठित करना एक बहुत विशाल कार्य होगा, और अब तक एक भी देश ऐसा नहीं जिसमें इतने बड़े पैमाने पर निर्वाचन किया गया हो।

"मोटा अन्दाज़ा यह है कि प्रान्तों की विधान सभाओं के सदस्य ३८०० से अधिक होंगे, और वे इतने ही या इससे कुछ कम निर्वाचन क्षेत्रों से निर्वाचित किये जायेंगे। लगभग ५०० सदस्य लोकसभा के और कोई २२० राज्यपरिषद के होंगे। इस प्रकार हमें ४५०० से अधिक सदस्यों के निर्वाचन की व्यवस्था करनी पड़ेगी, और देश को कोई ४००० या इतने ही निर्वाचन क्षेत्रों में विभक्त करना होगा। मैं उस दिन मनोरंजन के तौर पर यह हिसाब लगा रहा था कि हमारी निर्वाचक नामावली कैसी दिखाई देगी। यदि आप फुलस्केप साइज़ के एक पृष्ठ पर चालीस नाम छापें, तो हमें सब निर्वाचकों के नाम छापने के लिये इस आकार के कोई बीस लाख तख्तों की आवश्यकता पड़ेगी, और यदि आप इन सब को एक जिल्द में बांधें तो उसकी मोटाई कोई २०० गज़ हो जायगी। केवल इतने से इस काम के भारीपन का और उस मेहनत का कुछ ख्याल हो सकता है जो कि हमें अब से लेकर १९५०–५१ की शीत ऋतु तक, जब चुनाव होने की आशा है, नामावलियों को अन्तिम रूप देने में, निर्वाचन क्षेत्रों की

सीमा निर्धारित करने में, मतदान के थाने नियत करने में और अन्य व्यवस्थाये पूरी करने में लगाना पड़ेगा।"

संविधान ने सम्पत्ति, आमदनी, हैसियत, खिताब और साक्षरता आदि दकियानूसी और लोकतन्त्र विरोधी उन सब अर्हताओं या योग्यताओं को हटा कर साफ कर दिया है, जो कि १६१६ के ऐक्ट के अधीन सतानवे प्रतिशत तथा १६३५ के ऐक्ट के आधीन नब्बे प्रतिशत भारतीय जनता को नागरिकता के अपने प्राथमिक अधिकार अर्थात् मताधिकार के प्रयोग से वंचित कर देती थी। संविधान ने साम्प्रदायिक निर्वाचनों की उस बदनाम पद्धति को भी समाप्त कर दिया है, जिसने भारतीय समाज को कानूनन साम्प्रदायिक विभागों में बांट दिया था। अब भारत के नागरिकगण व्यक्ति की हैसियत से मत देंगे, हिन्दू, मुस्लिम या ईसाई की हैसियत से नहीं। अब प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र की एक साधारण निर्वाचक नामावलि होगी, और कोई व्यक्ति धर्म, मूलवंश, जाति या लिंग के आधार पर मत-दाताओं की सूची पंजीबद्ध होने के लिये अपात्र नहीं रहेगा।

संसद्

भारतीय संविधान में केन्द्रिक विधानमंण्डल का नाम संसद रखा गया है। इसका निर्माण राष्ट्रपति और दो सदनों से मिल कर होता है, जो क्रमशः राज्यपरिषद् और लोकसभा कहलाते है। राष्ट्रपति संसद् का समवायी अंग है। दोनों सदनों द्वारा पारित या पास किये हुये सब विधेयकों या बिलों पर उसकी नियमित अनुमति होनी चाहिये।

राज्य परिषद्

अन्य संघीय संविधानों की भांति भारतीय संविधान भी द्विसदन पद्धति को मान्यता देता है। राज्यपरिषद् में, जैसा कि इस के नाम से प्रकट

है, राज्यों के अर्थात् भारतीय संघ को संगठित करने वाले एककों या इकाइयों के प्रतिनिधि सम्मिलित होंगे। यह स्थायी निकाय या संगठन है, जिससे एक तिहाई सदस्य प्रति दूसरे वर्ष निवृत्त हो जायेंगे। इसकी अधिकतम सदस्य संख्या २५० है, जो लोकसभा की सदस्य संख्या की आधी है। इनमें से बारह सदस्यों को राष्ट्रपति कला, साहित्य, विज्ञान और समाज सेवा आदि के क्षेत्रों में उनकी ख्याति, अथवा अन्य विशेषताओं के कारण नाम निर्दिष्ट या नामज़द करेगा। शेष सदस्य राज्यों के प्रतिनिधि होंगे। चतुर्थ अनुसूची, जिसमें राज्यों में स्थानों के बटवारे का उल्लेख है, भाग (क) में उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि १४५ और भाग (ख) और (ग) के राज्यों के क्रमशः तिरपन और छ होंगे।

राज्य परिषद् के निर्वाचन परोक्ष होंगे। दूसरे शब्दों में, भाग (क) और (ख) में उल्लिखित राज्यों के प्रतिनिधि जनता द्वारा प्रत्यक्ष निर्वाचित नहीं होंगे। उनका निर्वाचन एक निर्वाचक गण द्वारा किया जायगा, जो उस राज्य की विधानसभा के निर्वाचित सदस्यों से मिल कर बनेगा। निर्वाचन अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति से एकल संक्रमणीय मत (देखिये पादटीका पृष्ठ ४२) द्वारा होगा। इस पद्धति के अनुसार एक मतदाता एक ही अभ्यर्थी या उम्मीदवार को मत देता है, परन्तु वह अभ्यर्थियों का क्रम निर्देश कर सकता है, जिसके अनुसार उसके दिये हुये मत पर विचार किया जाता है। इस व्यवस्था से उसे यह उचित भरोसा रहता है कि दिया हुआ मत व्यर्थ नहीं जायगा। भाग (ग) राज्यों के लिये चुनाव के तरीक़े का निश्चय संविधान ने संसद् पर छोड़ दिया है।

लोकसभा

लोकसभा की अधिकतम सदस्य संख्या ५०० नियत की गई है और इनका निर्वाचन राज्यों के मतदाता प्रत्यक्ष करेंगे। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिये स्थान रक्षित रखने का उपबन्ध कर दिया गया

संसद

राज्य परिषद | शेष राज्यों के प्रतिनिधि
अधिकतम सदस्य संख्या २५० | उपराष्ट्रपति पदेन
१२ सदस्य राष्ट्रपति द्वारा नाम निर्दिष्ट | राज्यपरिषद का सभापति है
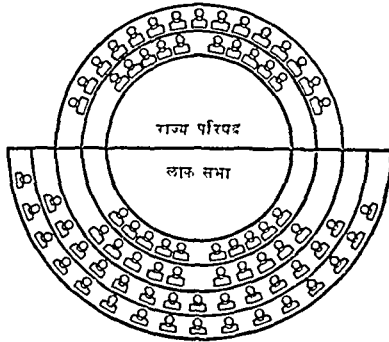
लोक सभा

५०० सदस्य, जो प्रति पांच वर्ष पश्चात् वयस्क मताधिकारियों द्वारा निर्वाचित किये जायेंगे। प्रत्येक सदस्य ५ लाख से ७॥ लाख लोगों तक का प्रतिनिधि होगा।

लोक सभा सब अनुदान स्वीकृत करती है, और उसे ही वित्तीय मामलों में सर्वोच्च प्राधिकार प्राप्त है।

संसद के दोनों सदनों का अधिवेशन वर्ष में कम से कम दो बार अवश्य होगा।

संसद संघ सूची और समवर्ती सूची में उल्लिखित किसी विषय पर विधि का निर्माण कर सकती है।

वह राज्य सूची के भी किसी विषय पर विधि का निर्माण कर सकती है यदि राज्य परिषद दो तिहाई के बहुमत से उसे राष्ट्रीय हित के लिये आवश्यक घोषित कर दे।

यदि राष्ट्रपति आपात अवस्था की घोषणा कर दे तो संसद राज्य सूची के किसी भी विषय पर विधि निर्माण कर सकती है।

है। ऐंग्लो इंण्डियन समुदाय के प्रतिनिधियों को राष्ट्रपति भी लोकसभा में नाम निर्दिष्ट या नामज़द कर सकता है।

यदि पहले ही विघटन न हो जाय तो साधारणतया सदन का जीवन-काल पांच वर्ष रखा गया है। आपात काल में इसका जीवन एक वार एक वर्ष तक वढ़ाया जा सकता है। परन्तु जब आपात की उद्घोषणा का प्रवर्तन समाप्त हो जायेगा, तब यह छः मास की कालावधि से आगे नहीं चल सकेगा।

निर्वाचन क्षेत्र

निर्वाचन के लिये राज्यों को प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में विभक्त कर दिया जायेगा, तथा प्रत्येक ऐसे निर्वाचन क्षेत्र को वांट में दिये जाने वाले सदस्यों की संख्या इस प्रकार निर्धारित की जायगी जिससे कि यह सुनिश्चित रहे कि प्रति ७,५०,००० जनसंख्या के लिये एक से कम सदस्य तथा प्रति ५,००,००० जनसंख्या के लिये एक से अधिक सदस्य न होगा। प्रधान शर्त यह है कि किसी भी निर्वाचन क्षेत्र में जनसंख्या का अनुपात भारत में सर्वत्र एक ही रहे।

निष्पक्ष निर्वाचन

निर्वाचनों की निष्पक्षता के सुनिश्चय के लिये एक स्वतन्त्र निर्वाचन आयोग या कमीशन नियुक्त किया जायेगा। वह निर्वाचक नामावलि की तैयारी और निर्वाचन संचालन के लिये उत्तरदायी होगा। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये मुख्य निर्वाचन आयुक्त (चीफ इलेक्शन कमिश्नर) की स्थिति की स्वतन्त्रता सुनिश्चित रखी जायेगी।

सत्र

सविधान चाहता है कि दोनों सदनों की वर्ष में कम से कम दो बार बैठक हुआ करे, और दोनों सत्रों के मध्य छः मास से अधिक का काल न रहे। इससे विधानमण्डल के सत्रों या अधिवेशनों के कार्यकाल की नियमितना सुनिश्चित हो जायेगी।

सदन की समस्त सदस्य संख्या के दस प्रतिशत की उपस्थिति से गण पूर्ति हो जायेगी। सब निर्णय उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के बहुमत द्वारा होंगे। अध्यक्ष को केवल निर्णायक मत देने का अधिकार होगा। द्वितीय सदन के सभापति पद पर बैठे हुये या पीठासीन पदाधिकारी सभापति और उपसभापति कहलायेंगे। लोकसभा के तत्सम पदाधिकारी अध्यक्ष और उपाध्यक्ष कहे जायेंगे।

'संसद का सदस्य बनने के लिये किसी भी व्यक्ति में ये अर्हतायें या योग्यताये होनी चाहियें :

१. वह भारत का नागरिक हो,

२. उसकी आयु राज्य परिषद की सदस्यता के लिये तीस और लोकसभा की सदस्यता के लिये पच्चीस वर्ष से कम न हो, और

३. उसमें वे सब अर्हतायें या योग्यतायें हों जो संसद् निश्चित् करे।

अनर्हता

जो व्यक्ति (१) भारत सरकार के अधीन लाभ का कोई पद धारण किये हुये हो, (२) विकृत चित्त का हो, (३) भारत का नागरिक न हो, स्वेच्छा से किसी विदेश का नागरिक बन जाये, (४) संसद् द्वारा निर्मित

किसी विधि द्वारा अनर्ह या अयोग्य हो जाय अथवा (५) एक ऐसा दिवालिया हो जिसका दिवालियापन जारी है, वह ससद् का संदस्य बनने के लिये अनर्ह होगा ।

सदस्यता की अनर्हता सम्बन्धी सब विवाद निर्णय के लिये राष्ट्रपति को सौंपे जायेंगे। परन्तु वह इन अभियोगों में निर्वाचन आयोग या चुनाव कमीशन के मन्त्रणानुसार कार्य करेगा ।

विशेषाधिकार

संविधान सदस्यों को संसद् में वाक्स्वातन्त्र्य का सुनिश्चय दिलाता है। परन्तु यह स्वातन्त्र्य संविधान के उपबन्धों और संसद् के नियमों तथा स्थायी आदेशों के अधीन है । विधान के निर्माता सदन अथवा उसकी किसी समिति के सम्मुख जो भाषण करेंगे, या मत देंगे उसके कारण वे न्यायालय में चलने वाली किसी भी कार्यवाही से उन्मुक्त या वरी रहेंगे। यह उन्मुक्ति सदन की कार्यवाहियों के उन प्रकाशनों के विषय में भी है जो सदन के तत्वावधान में या उसके प्राधिकार में किये गये हों। सदन के सदस्यों की ये शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां जब तक संसद् द्वारा परिभाषित नहीं कर दी जातीं, तब तक ये वे ही होंगी जो इंग्लिस्तान के हाउस आफ कामन्स की हैं।

विधान प्रक्रिया

यद्यपि केन्द्र का विधानमण्डल दो सदनों का है तथापि संविधान ने विधान रचना (कानून निर्माण) के लिये कुछ विषयों में प्रथम सदन की उच्चता को परित्राण किया या सुरक्षित रखा है । वित्तीय विषयों में इसका प्राधिकार अन्तिम है। प्रक्रिया के विस्तृत नियम संसद का प्रत्येक सदन स्वयं बनायेगा । संविधान ने प्रक्रिया की केवल वाह्य रूपरेखा अंकित कर दी है। अन्य नियमों में इसने यह भी उपबन्ध कर दिया है कि धन विधेयकों के अतिरिक्त सब विधेयक दोनों सदनों में पुरःस्थापित या पेश किये जा सकते हैं ।

साधारण विधेयकों के लिये प्रक्रिया

अ-वित्तीय विधेयक (बिल) दोनों सदनों द्वारा पारित या पास होने चाहिये। दोनों सदनों में गतिरोध हो जाने पर राष्ट्रपति उनकी संयुक्त बैठक बुला सकता है। ऐसी संयुक्त बैठकों में निर्णय दोनों सदनों के उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के बहुमत से होंगे। इस प्रकार जो विधयेक अंगीकृत होगा, वह दोनों सदनों द्वारा पारित या पास किया हुआ समझा जायेगा।

वित्त विधेयकों की प्रक्रिया

प्रत्येक वित्त विधेयक लोकसभा में पारण या पास होने के पश्चात् राज्य परिषद् में भेजा जायेगा, जिसे इसे अपनी सिफ़ारिशों सहित १४ दिन के भीतर वापिस भेज देना होगा। लोकसभा इसे स्वीकृत या अस्वीकृत कर सकेगी। लोकसभा द्वारा अंगीकृत अन्तिम रूप में यह दोनों सदनों द्वारा अंगीकृत समझा जायेगा।

वार्षिक वित्तीय विवरण

संविधान के अनुसार, राष्ट्रपति को संसद् के दोनों सदनों के समक्ष भारत सरकार की प्राक्कलित प्राप्तियों या आमदनियों के अन्दाज़ों और व्यय का वितरण रखवाना चाहिये। यह वार्षिक वित्तीय विवरण कहलाता है। इस में भारत की संचित निधि पर भारत राशियां अर्थात् केन्द्रीय कोष और अन्य प्रस्थापित व्यय की पूर्ति के लिये अपेक्षित आवश्यक राशियां दिखलायी जायेंगी। भारत की संचित निधि पर भारित व्यय से सम्बद्ध प्राक्कलन या अन्दाज़े संसद् में मतदान के लिये न रखे जायेंगे। अन्य सब पर संसद् का मत लिया जायेगा।

वित्तीय प्रक्रिया

संसद को भारत सरकार के वित्त पर प्रभावी नियन्त्रण रखने का अवसर दिया गया है। मतदाता के योग्य प्राक्कलन (अन्दाजे) सीधी लोकसभा में पुरःस्थापित या पेश की जायेंगी। राज्य परिषद् का इस व्यवस्था में स्थान नहीं है। लोकसभा किसी भी अनुदान को स्वीकृत या अस्वीकृत कर सकती या कम कर सकती है। किसी भी अनुदान की मांग राष्ट्रपति की सिपारिश के बिना न की जायेगी।

अनुदानों की मांग के पश्चात् विनियोग-विधेयक (Appropriation Bill) आता है। इसका प्रयोजन यह है कि जो अनुदान अर्थात् ग्रान्टें लोकसभा ने स्वीकृत कर ली है, और, जो व्यय संचित निधि पर भारित किया गया है, उनकी पूर्ति के लिये संचित निधि से धन का विनियोग ग्रहण किया जाय (धन लिया जाय)। धनों पर विचार करने और उन्हें स्वीकृत करने की यही प्रक्रिया ग्रेटब्रिटेन, कैनाडा, आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका में व्यवहृत होती है। ऐसे किसी संशोधन को पेश करने की इजाजत नहीं दी जायगी जो पूर्व स्वीकृत अनुदान की राशि में फेर-फार करना चाहता हो या उसके लक्ष्य को बदल देता हो या संचित निधि पर भारित व्यय की मात्रा को घटा देता हो। यह भी उपबन्ध है कि संचित निधि से सब धन विनियोग अधिनियम (अप्रोप्रियेशन ऐक्ट) के उपबन्धों के अनुसार ही निकाला जायगा।

सरकार की कर लगाने की प्रस्थापनायें अर्थात् प्रस्ताव और अन्य सम्बद्ध विषय विधेयक के अन्तर्गत आ जाते है। वित्तीय विधेयक राष्ट्रपति की सिपारिश से केवल लोकसभा में पुरःस्थापित या पेश किये जाते हैं।

अन्य अनुदान

लोकसभा को प्राधिकार है कि वह सांविधानिक प्रक्रिया की पूर्ति

लम्बित रहने तक किसी अनुदान को पेशगी स्वीकृति दे दे। यह कणक् अर्थात हिसाब में मत देना कहलाता है। इस प्रक्रिया से सदन को बजट पर विवाद करने का अधिक समय मिल जायगा। अब सदन के लिये सब अनुदानों की मांगों को वित्तीय वर्ष की समाप्ति पर ही स्वीकृत कर देना आवश्यक नहीं होगा।

लोकसभा प्रत्ययानुदान (वोट्स आफ क्रेडिट), और अपवादानुदान भी मंजूर कर सकती है। संविधान में अनुपूरक (सप्लिमेण्टरी), अपर (ऐडिशनल) और अधिकाई (एक्सेस) अनुदानों का भी उपबन्ध है, और जब तक उनके व्यय की मंजूरी लोकसभा नहीं कर देती, तब तक राष्ट्रपति आकस्मिक निधि में से पेशगी व्यय करवा सकता है।

राज्य

कार्यपालिका

प्रथम अनुसूची के भाग (क) और (ख) में परिगणित राज्यों का शासनयन्त्र संघ से बहुत मिलता जुलता है। कार्यपालन के प्राधिकार राज्यपाल या गवर्नर में निहित हैं। वह इनका प्रयोग स्वयं अथवा आधीन पदाधिकारियों द्वारा कर सकता है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि संसद अथवा राज्य के विधानमण्डल अन्य किसी प्राधिकारी या कृत्यों का भार सौंपने से निवारित कर दिये गये हैं।

राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षरित और मुद्रांकित अधिपत्र या परवाना द्वारा करता है। यदि वह पहले त्यागपत्र न दे दे, तो वह अपने पद पर पांच वर्ष रहता है। केवल वे ही भारतीय नागरिक इस पद के पात्र हैं जिनकी आयु पैंतीस वर्ष हो गयी हो, और जो केन्द्र या राज्य

के विधानमण्डलों में से किसी के सदस्य न हों। यदि कोई व्यक्ति अपनी नियुक्ति के समय किसी विधानमण्डल का सदस्य होगा, तो उसका स्थान उसी समय से रिक्त समझा जायगा

निःशुल्क सरकारी निवास के अतिरिक्त किसी भी राज्य के राज्यपाल को ५,५०० रु० मासिक वेतन और अन्य वे सब भत्ते तथा विशेषाधिकार उपलब्ध रहेंगें, जो पहले किसी प्रान्त के गवर्नर को मिलते थे।

शक्तियां

राज्यपाल मुख्य मन्त्री की और उसकी मन्त्रणा से अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति करता है। वह महाधिवक्ता (एडवोकेट जनरल) को भी नियुक्त करता है। वह राज्य के प्रशासन के लिये नियम बना सकता है। वह कुछ अवस्थाओं में क्षमा प्रदान कर सकता है, और दण्डादेश को स्थगित, परिहृत अथवा लघु कर सकता है। वह राज्य के विधान मण्डल के दोनों सदनों के सत्र का आरम्भ अथवा अवसान करता, विधानसभा का विघटन करता और किसी भी विधेयक की अनुमति देता अथवा उसे राष्ट्रपति द्वारा विचार के लिये रक्षित कर देता है। वह किसी विधेयक या बिल को विधानमण्डल में पुनर्विचार के लिये भेज सकता और दोनों सदनों को सन्देश भेज सकता अथवा सम्बोधित कर भाषण दे सकता है। राष्ट्रपति की भांति, विधानमण्डल की बैठक न हो रही हो, तो उसे अध्यादेश (आर्डिनेन्स) प्रख्यापित करने की शक्ति भी है। उसकी सिफारिश के बिना न कोई धन सम्बन्धी विधेयक या बिल सदन में पुरःस्थापित या पेश किया जा सकता और न किसी अनुदान (ग्राण्ट) की मांग की जा सकती है।

केन्द्र के समान, राज्यपाल को उसके कृत्यों के प्रयोग में सहायता तथा मन्त्रणा देने के लिये मन्त्रियों की परिषद होगी। राज्यों में भी संविधान मन्त्रीपरिषद के सिद्धान्त पर आचरण कराता है। परन्तु राज्यपाल को

धान द्वारा नियुक्त होता है, अपने पद पर पाच वर्ष तक रहता है

राजप्रमुख
राज्य सघो के साथ हुए करारो के अनुसार नियुक्त होता है

राज्यपाल या राजप्रमुख की शक्तियाँ

१. राज्य के कार्यपालक प्राधिकार उसमें निहित है
२. कुछ अवस्थाओ में क्षमा कर सकता, और दण्डादेशो को लघु कर सकता है
३. दोनो सदनो का आह्वान और अवसान और विधान सभा का विघटन करता है
४. उसकी सिफारिश के बिना सदन में न कोई धन विधेयक पुरःस्थापित हो सकता और न कोई अनुदान मांगा जा सकता है
५. विधान मडल के विश्रान्ति काल में अध्यादेश प्रख्यापित कर सकता है
६. किसी विधेयक को पुनर्विचार के लिये विधान मडल में भेज सकता है।

समस्त आवश्यक सूचनायें देने के लिये और राज्य के प्रधान की हैसियत से अपना प्राधिकार अधिक प्रभावी रूपेण प्रयुक्त करने में समर्थ बनाने के लिये, मुख्य मन्त्री को निर्देश है कि वह (१) प्रशासन के सम्बन्ध में मन्त्रीपरिषद् के सब विनिश्चयों और विधान सम्बन्धी सब प्रस्थापनाओं को उसके सामने पेश करे, (२) प्रशासन के तथा विधान सम्बन्धी प्रस्थापनाओं के विषय में उन सब सूचनाओं को दे जिन्हें राज्यपाल मांगे, और (३) यदि राज्यपाल वैसी अपेक्षा करे, तो जिस विषय पर मन्त्रीपरिषद् ने विचार न किया हो, वह परिषद् के सामने विचारार्थ उपस्थित करे। संविधान के अनुसार बिहार, मध्यप्रदेश और उड़ीसा में एक एक मन्त्री पर जनजाति हित का भार रहेगा।

हैदराबाद, मैसोर, जम्मू व काश्मीर के अतिरिक्त प्रथम अनुसूची के भाग (ख) में परिगणित राज्यों के प्रधान राजप्रमुख कहलाते हैं। उनकी नियुक्ति रियासत संघों और भारत सरकार के बीच हुये करारों अर्थात् सन्धियों के अनुसार होती है। उनके वेतन भी इन क़रारों के अनुसार नियत होते हैं। निःशुल्क सरकारी निवासस्थान के अतिरिक्त वे उन अन्य भत्तों तथा विशेषाधिकारों के अधिकारी हैं जिनको राष्ट्रपति निर्धारित करे।

इन राज्यों के कार्यपालक राजप्रमुखों में निहित है। उन्हें सहायता तथा मन्त्रणा देने के लिये एक एक मन्त्रीपरिषद् रहेगी। विधानमण्डलों और मन्त्री परिषदों के भली भांति संघटित होने से पूर्व संक्रमण की कालावधि में मन्त्री परिषद् के सदस्यों की नियुक्ति राजप्रमुख करेंगे। इन राज्यों में से अधिकतर में उत्तरदायी शासन नहीं था, इस लिये उनका प्रतिनिधि शासन की ओर परिवर्तन शीघ्र नहीं हो सकता। इस कारण संविधान में यह उपबन्ध या व्यवस्था है कि दस वर्ष तक अथवा जब तक संसद निश्चय करे, तब तक इन राज्यों का शासन अपने कृत्यों का निर्वाह भारत सरकार के साधारण नियंत्रण में करेगा। उनको निर्देश है कि वे राष्ट्रपति द्वारा समय समय पर जारी की हुई हिदायतों पर अमल करें। रियासतों के

शासनों द्वारा राष्ट्रपति की हिदायतों पर अमल करने में असफल रहने पर संविधान का भंग होना समझा जायेगा।

जम्मु और काश्मीर राज्य के विषय में केन्द्र का क्षेत्राधिकार संघ और समवर्ती सूची के उन विषयों तक सीमित है, जिनको राज्य के शासन के साथ सलाह करने के पश्चात् प्रवेश पत्र (इन्स्ट्रूमेण्ट आफ ऐक्सेशन) से संगत घोषित करे। इस क्षेत्राधिकार की सीमा सूचियों के उन अन्य विषयों तक बढ़ायी जा सकती है, जिन पर राज्य सरकार और भारत सरकार सहमत हो जाय।

भाग (ग) में उल्लिखित राज्यों का प्रशासन, राष्ट्रपति अपने द्वारा नियुक्त मुख्य आयुक्त (चीफ कमिश्नर) अथवा उपराज्यपाल (लेफ्टिनेण्ट गवर्नर) द्वारा करता है। इन राज्यों का प्रशासन किसी पड़ोसी राज्य के शासन द्वारा भी किया जा सकता है।

संसद इन राज्यों के लिये मन्त्रणा परिषद् अथवा मन्त्रीपरिषद् का उपबन्ध भी कर सकती है। वह उनके संविधानों, शक्तियों और कृत्यों के सम्बन्ध में नियम बना सकती है। संविधान इन राज्यों में उत्तरदायी शासन का पुरःस्थापन धीरे धीरे करना चाहता है।

राज्यों के विधान मंडल

केन्द्र के समान राज्यों के विधानमण्डलों, राज्यपाल और राज्य के विधान सम्बन्धी सदन या सदनों से मिल कर बनेंगे। मद्रास, बम्बई, उत्तर प्रदेश, पंजाब, पश्चिमी बंगाल, मैसोर और बिहार के विधानमण्डल, विधान सभा और विधानपरिषद् दो सदनों के होंगे और शेष राज्यों में एक ही सदन का विधानमण्डल होगा जो विधानसभा कहलायेगा। द्वि सदन की पद्धति परीक्षण के लिये अपनायी गई है। संसद् को प्राधिकार है कि यदि

राज्य विधान मण्डल

विधान परिषद

१/६ राज्यपाल द्वारा नाम निर्दिष्ट
एक तिहाई विधान सभा द्वारा
निर्वाचित
आधे सदस्य स्थानीय निकायों,
स्नातकों और शिक्षकों द्वारा निर्वाचित

विधान परिषदें सात राज्यों में होगी।
विधान परिषद की सदस्य सख्या
विधान सभा की एक चौथाई होगी
एक तिहाई सदस्य प्रति दूसरे वर्ष
निवृत्त हो जायेंगे
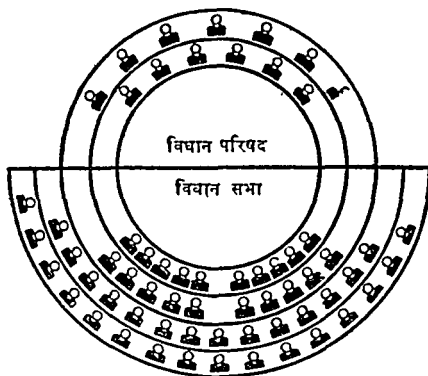
चुनी जाती है

जनता द्वारा

राज्य विधान मडल
राज्य सूची और समवर्ती सूची के सब विषयों पर विधि निर्माण कर सकता है
वर्ष मे कम से कम दो बार बैठना है, दो सत्रों में अन्तर छः मास से अधिक नही होना चाहिये

वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित सदस्यो की सख्या ६०-५००
चुनाव प्रति पाच वर्ष पश्चात्
आबादी के प्रति ७५,००० का एक प्रतिनिधि

किसी राज्य की विधानसभा इस आशय का संकल्प पारित या पास कर दे, तो उसमें विधानपरिषद् (लेजिस्लेटिव कौंसिल) का उत्सादन या उसकी सृष्टि कर दें। इस संकल्प पर आचरण कराने वाली विधि या क़ानून संविधान का संशोधन नहीं समझा जायेगा।

विधान सभा

राज्यों की विधान सभाओं (लेजिस्लेटिव असेम्बलियों) का साधारण जीवन, यदि वे पहले विघटित न कर दी जाय तो, पांच वर्ष का है। ब्रिटिश काल के भारत की केन्द्रिक असेम्बली की भांति आपात अवस्था में इसकी कालावधि बढ़ायी जा सकती है, परन्तु एक बार में एक वर्ष से अधिक नहीं। उद्घोषणा का प्रवर्तन समाप्त होने के पश्चात् छः मास के भीतर इसका विघटन हो ही जाना चाहिये। राज्यों की विधान सभाओं का निर्वाचन वयस्क या बालिग मताधिकार के आधार पर होगा। इनकी सदस्य संख्या ५०० से अधिक और ६० से न्यून नही होगी। वास्तविक संख्या राज्य की आबादी के प्रति ७५,००० पीछे एक प्रतिनिधि के हिसाब से निर्धारित की जायेगी। इसके अपवाद आसाम के स्वायत्त जिले और शिलांग की कटक (छावनी) तथा नगर पालिका (म्युनिसिपैलिटी) का निर्वाचन क्षेत्र है, जहां आबादी की लघुता के कारण यह हिसाब लागू नहीं हो सकता। राज्य की आबादी का निश्चय पूर्ववर्ती जनगणना के पश्चात् प्रकाशित अंकों के आधार पर किया जायेगा। अनुसूचित जन जातियों और जातियों के अतिरिक्त स्थानों का रक्षण अन्य किसी के लिये नहीं होगा। राज्यपाल को यदि यह निश्चय हो जाये कि ऐंग्लोइंण्डियन समुदाय को प्रतिनिधित्व की आवश्यकता है, और उसका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं हुआ, तो वह उसके सदस्यों को सभा में नाम निर्दिष्ट या नामज़द कर सकता है।

विधान सभा का सदस्य बनने के लिये अर्हता यह है कि (१) वह भारत

का नागरिक हो, (२) उसकी आयु पच्चीस वर्ष से न्यून न हो और (३) उसमे वे पव अर्हताये हो जिनका निश्चय ससद् करे ।

विधान परिषद्

विधान परिषद् की सदस्य सख्या चालीस से कम और उस राज्य की विधानसभा की सदस्य सख्या की एक चोथाई से अधिक नही होगी। इस की सदस्यता विविध प्रकार की होगी। इसके लगभग एक तिहाई सदस्यो का निर्वाचन नगरपालिकाओ (म्युनिसिपैलिटियो), जिला मण्डलियो और राज्य के उन अन्य स्थानीय प्राधिकारियो के सदस्यो से मिल कर बना हुआ निर्वाचकगण करेगा जिनका ससद् उल्लेख कर दे। बारहवे भाग का निर्वाचन तीन वर्ष पुराने स्नातको से बना हुआ निर्वाचकगण करेगा। एक अन्य बारहवे भाग का निर्वाचन वे अध्यापक करेगे, जो राज्य मे कम से कम तीन वर्ष तक ऐसी शिक्षण सस्थाओ मे अध्यापन कर चुके हो, जिनका दर्जा उच्च प्राथमिक या सेकेण्डरी स्कूल से नीचा नही है। एक तिहाई का निर्वाचन विधान सभा के सदस्य असदस्यो मे से करेगे। शेष को राज्यपाल नाम निर्दिष्ट करेगा। वे ऐसे व्यक्ति होगे, जिनको साहित्य विज्ञान, कला, सहकारिता आन्दोलन ओर समाज सेवा का विशेष ज्ञान अथवा अनुभव होगा।

राज्य की विधानपरिषद् एक स्थायी निकाय होगी, जिसके एक तिहाई सदस्य प्रति दूसरे वर्ष निवृत्त होते रहेगे। विधानपरिषद् के प्रत्येक सदस्य की न्यूनतम आयु तीस वर्ष होगी। अन्य अर्हताये यही है जो विधान सभा के सदस्यो की है।

सविधान प्रथम अनुसूची के भाग ग मे परिगणित राज्यो मे भी विधायी निकायो की कल्पना करता है। इन राज्यो मे विधानमण्डल का कार्य करने के लिये ससद नाम निर्दिष्ट या नामजद अथवा अशत निर्वाचित निकाय की सृष्टि कर सकती है।

तीन रक्षाकवच

न्यायपालिका

सुसंगठित, सक्षम और स्वतन्त्र न्यायपालिका लोकतन्त्र की रक्षिका होती है। यह जनता के अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की रक्षा करती है। संघीय व्यवस्था में यह संविधान की प्रहरी भी है। न्यायपालिका द्वारा ही विभिन्न अंगों की शक्तियां नियमन में रहती हैं। निर्देश या हिदायतों के अतिरिक्त संविधान ने न्यायपालिका की स्थिति को स्वतन्त्र रखने के लिये विशेष उपबन्धों को अंगीकृत किया है।

उच्चतम न्यायालय

भारतीय न्यायपालिका का शिरोमणि उच्चतम न्यायालय है। साधारणतया इस में एक मुख्य न्यायाधिपति और सात न्यायाधीश रहेंगे।

प्रिवी कौंसिल अब देश का सर्वोच्च न्यायालय नहीं रही। न्यायाधीशों की नियुक्तियों के लिये भारतीय संविधान ने मध्य मार्ग का अवलम्बन किया है। इसने ग्रेट ब्रिटेन की भांति कार्यपालिका को यथेष्ट स्वतन्त्रता प्रदान नहीं की। और न इसने अमेरिकन पद्धति का अनुसरण किया है, जिसमें न्यायाधीशों की नियुक्ति सेनेट की अनुमति से राष्ट्रपति करता है। भारतीय संविधान चाहता है कि न्यायाधीशों की नियुक्ति करते हुय न्यायपालक प्राधिकारियों के साथ पर्याप्त विचार कर लिया जाये। फलतः भारत के मुख्य न्यायाधिपति को नियुक्त करते हुये उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों (सुप्रीमकोर्ट और हाई कोर्ट) के जिन न्यायाधीशों से राष्ट्रपति आवश्यक समझे, उनसे उसे परामर्श कर लेना चाहिये। उच्चतम न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों का चुनाव करते हुये उसको मुख्य न्यायाधिपति से अनिवार्य परामर्श कर लेना चाहिये।

पदावधि

देश की उत्कृष्ट विधि सम्बन्धी प्रतिभा को आकृष्ट करने के लिये उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश होनेवाले व्यक्ति की पात्रता यह रखी गयी है कि यह या तो किसी उच्च न्यायालय का कम से कम पांच वर्ष तक न्यायाधीश रह चुका हो, या वह कम से कम दस वर्ष तक किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता (एडवोकेट) रहा हो, या राष्ट्रपति की राय में पारंगत विधिवेत्ता (जुरिस्ट) हो। प्रत्येक न्यायाधीश के लिये पदावधि की प्रत्याभूति या गारण्टी दी गई है। अपनी आयु पैंसट वर्ष की होने तक वह अपने पद पर बना रहेगा। उसे सिद्ध कदाचार अथवा असमर्थता के आधार पर ही अपने पद से हटाया जा सकता है। राष्ट्रपति किसी न्यायाधीश को तभी हटा सकता है, जब संसद् के प्रत्येक सदन ने उसके विरुद्ध समावेदन (एड्रेस) पेश किया हो।

न्यायाधीशों की निष्पक्षता और ईमानदारी का सुनिश्चय करने के

न्यायपालिका

उच्चतम न्यायालय

राष्ट्रपति

नियुक्त करता है

मुख्य न्यायाधिकारी

→ मुख्य न्यायाधिकारी के परामर्श से अन्य न्यायाधीशों को नियुक्त करता है
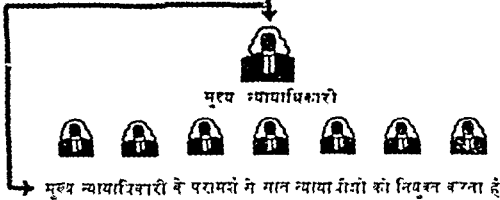
उच्चतम न्यायालय

उच्चतम न्यायालय को तीन क्षेत्राधिकार है, आरम्भिक, अपीलीय और मन्त्रणा के

राज्यों और संघ के मध्य अथवा राज्यों के मध्य सांविधानिक विवादों का निर्णायक है

अपीलीय क्षेत्राधिकार के अन्तर्भुक्त ये बातें हैं -- यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित कर दे कि मामले में संविधान के निर्वाचन का कोई सारवान विधि प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है ।

व्यावहारिक अभियोग २० हजार रु० या इससे अधिक के हैं,

दाण्डिक अभियोग जिनमे उच्च न्यायालय अपील का निर्णय करते हुये मुक्ति दंड बदलकर मृत्युदंड में परिवर्तित कर दे

और जहां उच्चतम न्यायालय स्वयं अपील की विशेष अनुमति दे।

उच्च न्यायालय

निम्न न्यायालय

लिये सविधान ने उन्हें निवृत्त होने के बाद भारत के किसी भी न्यायालय में या न्यायिक प्राधिकारी के सामने वकालत या पैरवी करने से रोक दिया है। यह प्रक्रिया उन पाबन्दियों के समान है, जो लोकसेवा आयोग (पब्लिक सर्विस कमीशन) के सदस्यों को भविष्य में नौकरी में न लेने के लिये लगायी गयी है। न्यायाधीशों की सेवा की शर्तों में मुख्य न्यायाधिपति तथा ऐसे न्यायाधीशों के लिये निःशुल्क निवास भी सम्मिलित हैं, जिनको क्रमशः ५,००० रु० और ४,००० रु० मासिक वेतन मिलता हो। एक बार नियुक्ति के पश्चात् उनके अधिकारों, विशेषाधिकारों, और भत्तों में उनके लिये अलाभकारी कोई परिवर्तन नहीं किया जायगा।

यदि सक्षम न्यायाधीश पर्याप्त संख्या में नही मिलेंगे, तो तदर्थ (ऐड हाक) और निवृत्त न्यायाधीश भी नियुक्त किये जा सकेंगे। राष्ट्रपति की सहमति से मुख्य न्यायाधिपति उच्च न्यायालय के किसी भी पात्र न्यायाधीश को स्वल्प काल के लिये नियुक्त कर सकता है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और ब्रिटेन में प्रचलित कार्य प्रणाली के अनुसार मुख्य न्यायाधिपति निवृत्त न्यायाधीशों को भी राष्ट्रपति की सहमति लेकर किसी विशेष प्रयोजन के लिये कार्य करने का अनुरोध कर सकता है। परन्तु वे न्यायालय के पूरे न्यायाधीश नही समझे जायेंगे, हां, उन्हें क्षेत्राधिकार की शक्तियां और विशेषाधिकार सब प्राप्त होंगे। मुख्य न्यायाधिपति की अनुपस्थिति में राष्ट्रपति उच्चतम न्यायालय के किसी भी न्यायाधीश को कार्यकारी मुख्य न्यायाधिपति नियुक्त कर सकेगा।

स्थान

उच्चतम न्यायालय साधारणतया दिल्ली में रहेगा। परन्तु समय समय पर ऐसे अन्य स्थानों पर भी अपना कार्य कर सकेगा, जिनका निर्धारण मुख्य न्यायाधिपति राष्ट्रपति के अनुमोदन से करेगा।

क्षेत्राधिकार

नवीन संविधान के अनुसार, उच्चतम न्यायालय को ससार के किसी भी उच्च न्यायालय से, अमेरिका के सुप्रीमकोर्ट से भी अधिक व्यापक शक्ति प्राप्त है। अभिलेख या रिकार्ड के न्यायालय की हैसियत से इसे इस प्रकार के न्यायालयों की सभी शक्तियां, साथ ही न्यायालय अवमान के लिये दण्ड देने की शक्ति प्राप्त है। यह संविधान का अन्तिम निर्वाचन या व्याख्याकर्त्ता भी है, और व्यावहारिक या दीवानी दलीलों को सुनने वाला अन्तिम न्यायालय भी। आपराधिक या फौजदारी मामलों में यह अपील की विशेष अनुमति दे सकता है, और कुछ विशिष्ट मामलों में इसे फौजदारी अपील के क्षेत्राधिकार की शक्ति भी है।

प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार

उच्चतम न्यायालय के प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार का सम्बन्ध उन विवादों से है, जो किसी राज्य या राज्यों और भारत सरकार के बीच अथवा परस्पर राज्यों के बीच खड़े हो गये हों। परन्तु भारतीय रियासतों के साथ जो सन्धियां हुई हैं उनके उपबन्धों से उत्पन्न विवाद इस क्षेत्राधिकार में नहीं आते।

अपीलीय क्षेत्राधिकार

उच्चतम न्यायालय का अपीलीय क्षेत्राधिकार तीन प्रकार का है: सांविधानिक, व्यावहारिक और आपराधिक। सांविधानिक विषयों में यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित कर दे कि किसी मामले में सारवान विधि प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है, याने कोई खास क़ानूनी मसला अटका हुआ है, तो अपील हो सकेगी। यदि उच्चतम न्यायालय का समाधान हो जाय कि किसी मामले में इस प्रकार का वाद-पद या विवादास्पद प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है, तो

वह स्वयं भी अपील की विशेष अनुमति दे सकता है। व्यावहारिक या दीवानी मामलों में यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित कर दे कि दावे की राशि बीस हजार रुपये से कम नहीं है, तो साधारणतया अपील उच्चतम न्यायालय में हो सकेगी। आपराधिक मामलों में अपीलीय क्षेत्राधिकार वहां मान्य है, जहां उच्च न्यायालय (१) अपील में किसी अभियुक्त व्यक्ति की विमुक्ति या रिहाई के आदेश को उलट दे, तथा उसे मृत्यु दण्डादेश दे, अथवा (२) अपने आधीन न्यायालय से किसी मामले को परीक्षण करने के हेतु अपने पास मंगा ले तथा ऐसे परीक्षण में अभियुक्त व्यक्ति को सिद्धदोष ठहरा कर मृत्यु दण्डादेश दे दे, अथवा (३) प्रमाणित कर दे कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने योग्य है।

आपराधिक या फौजदारी मामलों में संसद क्षेत्राधिकार को उल्लिखित शर्तों और परिसीमाओं के भीतर बढ़ा भी सकती है।

अन्य क्षेत्राधिकार

जिन विषयों का संविधान में उल्लेख नहीं हुआ, उनके सम्बन्ध में उच्चतम न्यायालय, फेडरल कोर्ट के क्षेत्राधिकार और शक्तियों का उत्तराधिकारी भी है। अन्य न्यायालयों के निर्णयों पर पुनर्विलोकन (रिवीज़न) का इसका क्षेत्राधिकार व्यापक है। सशस्त्र बलों अर्थात् सेनाओं के लिये संगठित न्यायालय या न्यायाधिकरण को छोड़ कर यह देश के किसी भी न्यायालय या न्यायाधिकरण के विरुद्ध अपील की विशेष अनुमति दे सकता है। संसद् इसका क्षेत्राधिकार अन्य प्रकार से भी बढ़ा सकती है।

परामर्श कृत्य

उच्चतम न्यायालय को कुछ मामलों में परामर्श कृत्य के अधिकार भी प्राप्त है। राष्ट्रपति सार्वजनिक महत्व की विधि अथवा क़ानून या तथ्य

सम्बन्धी किसी भी प्रश्न पर मतदान के लिये इसके सुपुर्द कर सकेगा। इस क्षेत्राधिकार में वे विवाद भी मतदान के लिये इसके सुपुर्द किये जा सकते हैं जिनमें भूतपूर्व भारतीय रियासतों के साथ जो सन्धियां या समझौते हुये हैं, उनका निर्वचन या व्याख्या अन्तर्ग्रस्त है, यद्यपि वे न्यायालय के प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार में नहीं आते।

प्रक्रिया

उच्चतम न्यायालय अपनी कार्यप्रणाली और प्रक्रिया के नियमन के लिये राष्ट्रपति के अनुमोदन से और संसद् द्वारा निर्मित विधियों के आधीन स्वयं नियम बना सकेगा। उच्चतम न्यायालय सब निर्णयों को खुले न्यायालय में और उपस्थित न्यायाधीशों की बहुसंख्या की सहमति से सुनायेगा। किसी न्यायाधीश का अपने सहयोगियों से मतभेद हो तो वह विमत निर्णय या मतभेदमूलक निर्णय दे सकेगा।

सब न्यायलयों पर उच्चतम न्यायालय का प्राधिकार

उच्चतम न्यायालय देश का सर्वोच्च न्यायालय है, इस लिये इसके द्वारा घोषित विधि से भारत के सब न्यायालय बाधित होंगे। संसद् जो विधि या क़ानून बना देगी, उसके आधीन रहते हुये उच्चतम न्यायालय को अपने निर्णयों के पुनर्विलोकन की भी शक्ति प्राप्त है।

उच्चतम न्यायालय की स्वतन्त्रता

उच्चतम न्यायालय की स्वतन्त्रता सुनिश्चित् रखने के लिये, अपने कर्मचारियों की भरती करने और उनके सेवा सम्बन्धी नियम बनाने का अधिकार मुख्य न्यायाधिपति को अथवा तद् द्वारा निदेशित किसी अन्य

न्यायाधीश या पदाधिकारी को दिया गया है। इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिये उच्चतम न्यायालय का प्रशासन-व्यय भारत की संचित निधि पर भारित किया गया है, और इसमे उसके पदाधिकारियो को दिये जाने वाले वेतन, भत्ते, और निवृत्ति वेतन या पेन्शने भी सम्मिलित है। न्याया-लय द्वारा ली गयी फीस और अन्य धन इस निधि का ही भाग होगी।

उच्च न्यायालय

संविधान मे प्रत्येक राज्य के लिये एक उच्च न्यायालय रखा गया है। राष्ट्रपति ही मुख्य न्यायाधिपति और अन्य न्यायाधीशो की संख्या निर्धा-रित करेगा। राष्ट्रपति न्यायाधीशो की नियुक्ति भारत के मुख्य न्याया-धिपति और राज्य के राज्यपाल के साथ परामर्श के पश्चात् करेगा। मुख्य न्यायाधिपति की नियुक्ति को छोड कर अन्य न्यायाधीशो की नियुक्ति मे सम्बद्ध उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति से भी परामर्श लिया जायेगा। साधारणतया प्रत्येक न्यायाधीश साठ वर्ष की आयु तक अपने पद पर रहेगा। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की अर्हता या योग्यता उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशो की अर्हता से कुछ भिन्न रखी गयी है। भारत का कोई भी नागरिक जो दस वर्ष तक किसी न्यायिक पद पर रह चुका है, अथवा जो दस वर्ष तक किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता (एडवोकेट) रह चुका है, वह इस पद का पात्र होगा।

उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को ८,००० रु० और प्रत्येक न्यायाधीश को ३,५०० रु० मासिक वेतन मिलेंगे। उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशो की भाति इन न्यायाधीशो के वेतनादि और सेवा की शर्तों मे भी उनके कार्यकाल मे उनके लिये अलाभकारी परिवर्तन नही किये जायेंगे। कार्यकारी मुख्य न्यायाधिपति और निवृत्त न्यायाधीशो की नियुक्ति के सम्बन्ध मे भी वही उपबन्ध है जो उच्चतम न्यायालय मे है।

उच्च न्यायालय सम्बन्धी उपबन्ध गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया ऐक्ट १९३५ के आधार पर बनाये गये हैं। संविधान के तथा उपयुक्त विधानमण्डल द्वारा निर्मित विधि के उपबन्धों के अधीन, राज्यों के उच्च न्यायालयों के वर्तमान क्षेत्राधिकार और शक्तियां आज भी स्थिर रहेंगी। राजस्व और उसके संग्रह पर उनके प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार की परिसीमायें हटा दी गयी हैं। उक्त न्यायालयों को (१) मूल अधिकार प्रभावी करने के लिये लेख (रिट) निकालने की, (२) राज्य के व्यावहारिक या दीवानी न्यायालयों तथा न्यायाधिकरणों का अधीक्षण करने की और (३) अधीन न्यायालयों से उन अभियोगों को जिनमें संविधान का निर्वचन या व्याख्या विवादग्रस्त है अपने समक्ष मंगवा लेने की शक्तियां भी दी गयी हैं।

संसद ही किसी राज्य के उच्च न्यायालय के भौगोलिक क्षेत्र को बढ़ा या घटा सकती है। राज्य का विधानमण्डल राज्य से बाहर के क्षेत्राधिकार के सम्बन्ध में विचार करने के लिये सक्षम नहीं है।

अधीन न्यायालय

संविधान के अनुसार जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति, पदस्थापना या तैनाती और पदोन्नति, राज्यपाल अपने राज्य के उच्च न्यायालय से परामर्श करके करेगा। इस पद के लिये आवश्यक अर्हता या योग्यता यह होगी कि या तो वह व्यक्ति पहले से संघ या राज्य की सेवा में हो, और या वह कम से कम सात वर्ष तक अधिवक्ता या वकील रह चुका हो, और उच्च न्यायालय ने नियुक्ति के लिये उसकी सिफारिश की हो। जिला न्यायाधीशों के अतिरिक्त अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति राज्यपाल उन नियमों के अनुसार करेगा, जो वह राज्य लोकसेवा आयोग (स्टेट पब्लिक सर्विस कमीशन) और उच्च न्यायालय से परामर्श करके बनायेगा। जिला तथा अन्य अधीन न्यायालयों पर उच्च न्यायालय का

रहेगा, और उनके ऐसे न्यायाधीशों की पदस्थापना या तैनाती और पदोन्नति भी वही करेगा जो जिला न्यायाधीश से कम दर्जे के पदों पर हों।

लोक सेवायें

किसी भी देश के प्रशासन का मानदण्ड तथा उसकी कार्यकुशलता अन्ततोगत्वा उसके लोक सेवकों की समर्थता, प्रशिक्षण या ट्रेनिंग और सचाई पर निर्भर करता है। इसी कारण संविधान ने लोकसेवा की आधारभूत शर्तें, पदावधि, अधिकार, उपलब्धि या वेतनादि, विशेषाधिकार और भरती के नियम तय करते हुये यह ध्यान रखा है कि जन कल्याणकारी राज्य के प्रशासन यन्त्र की ओर योग्य, ईमानदार और व्यापक दृष्टि-सम्पन्न व्यक्ति आकृष्ट हों। इसमें अवसर की समानता की सबके लिये प्रत्याभूति या गारण्टी की गयी है, परन्तु अनुसूचित जातियों और जन जातियों को अपवाद कर दिया गया है, पर प्रशासन की उत्कृष्टता का पोषण करते हुये सेवाओं तथा पदों पर नियुक्ति सम्बन्धी उनके दावों को ध्यान में रखा जायेगा।

लोक सेवा आयोग

लोक सेवकों की लोकसेवा आयोग (पब्लिक सर्विस कमीशन) की मारफत भरती लोकतान्त्रिक राज्यों में एक स्वीकृत सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त पर भारत में पहले से ही अमल हो रहा है। संविधान में संघ और सब राज्यों के लिये एक लोकसेवा आयोग का उपबन्ध किया गया है। जिन राज्यों के विधानमण्डल इस आशय का संकल्प या प्रस्ताव पारित या पास कर देंगे, वे दो या दो से अधिक मिलकर एक ही लोकसेवा आयोग से काम चला सकेंगे, उन राज्यों की आवश्यकता पूर्ति के लिये संसद एक ही लोकसेवा आयोग रहने की विधि या क़ानून बना देगी। राज्य चाहें तो संघ के लोकसेवा आयोग से भी, अपनी ओर से काम करने की प्रार्थना कर सकते हैं।

संघ और राज्यों के लोकसेवा आयोगों का मुख्य कृत्य नियुक्ति के लिये अभ्यर्थियों या उम्मीदवारों की सिपारिश करना और केन्द्र तथा राज्यों की सेनाओं में भरती के लिये परीक्षायें संचारित करना है। यदि दो या दो से अधिक राज्यों की वैसी अपेक्षा हो, तो संघ का लोकसेवा आयोग ऐसी सेवाओं में भर्ती के लिये जिनमें विशेष अर्हता या योग्यता अपेक्षित होती है, संयुक्त भर्ती की योजनायें बना कर उन पर अमल करेगा। सेवाओं के संरक्षक होने के नाते लोकसेवा आयोगों से निम्न मामलों में परामर्श लिया जायेगा :

क. असैनिक सेवाओं और पदों के लिये भर्ती से सम्बद्ध विषय,

ख. असैनिक सेवाओं और पदों पर नियुक्त करने के एक सेवा से दूसरी सेवा में पदोन्नति और बदली करने के तथा अभ्यर्थियों या उम्मीद-वारों की ऐसी नियुक्ति, पदोन्नति अथवा बदली की उपयुक्तता के बारे में अनुसरण किये जाने वाले सिद्धान्त, और

ग. जो व्यक्ति भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार की असैनिक हैसियत से सेवा कर रहा है, उससे सम्बद्ध अनुशासन विषयक मामले और तत्सम्बन्धी अभ्यावेदन या मेमोरियल अथवा याचिका या प्रार्थना पत्र।

उनसे उन दावों के विषय में परामर्श लिया जायेगा, जो लोकसेवक सरकारी कर्त्तव्य पालन करने के क़ारण अपने विरुद्ध चलायी गयी विधि सम्बन्धी कार्यवाहियों या क़ानूनी कार्यवाहियों में प्रतिरक्षा या सफाई पर उसके जो खर्च हुये हैं, तथा सरकार की सेवा करते समय उसे जो चोट पहुंची या अंग हानि हुई है उसके कारण निवृत्ति वेतन या पेन्शन दी जाने के सम्बन्ध में उनसे उन दावों के विषय में परामर्श लिया जायेगा। राष्ट्र-पति या राज्यपाल या राजप्रमुख जो मामले उनके सुपुर्द करेंगे, उन पर भी परामर्श देना उनका कर्त्तव्य होगा। जो पद, संघ या किसी राज्य की अनुसूचित जातियों या जन जातियों या किसी अनुन्नत वर्ग के सदस्यों

के लिये रक्षित होंगे, उससे इन आयोगों या कमीशनों का कोई वास्ता नहीं होगा। विनियम बना कर संघ और राज्यों के प्रमुख यह व्यवस्था कर सकेंगें कि कुछ मामलों में साधारणतया अथवा कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में कुछ विशेष मामलो में लोकसेवा आयोगों से परामर्श करना आवश्यक होगा।

सदस्यता

इन आयोगों या कमीशनों की सदस्य संख्या संविधान ने निश्चित नही की है। ठीक संख्या और उन की सेवा की शर्तें विविध प्रशासनों के प्रमुख तय करेंगे। परन्तु सेवा की शर्तों में, सदस्यों की नियुक्ति के पश्चात् उनके लिये अलाभकारी परिवर्तन नही किया जा सकेगा।

इन आयोगों (कमीशनो) का काम लोकसेवाओं के लिये उपयुक्त व्यक्तियो का चुनाव करना है, इस लिये इनके सदस्यों का अनुभवी होना अत्यन्त आवश्यक है। इसी कारण संविधान में एक उपबन्ध है कि प्रत्येक आयोग के लगभग आधे सदस्य ऐसे हों, जो कम से कम १० वर्ष तक सरकार की सेवा कर चुके हों।

पदावधि

लोकसेवा आयोग के प्रत्येक सदस्य की पदावधि छ वर्ष अथवा संघ आयोग के विषय में जब तक वह पंसठ वर्ष की आयु का न हो जाय तब तक और राज्य आयोग के विषय में जब तक वह साठ वर्ष का न हो जाय, तब तक निश्चित की गई है।

सदस्यों का हटाया जाना

राष्ट्रपति लोकसेवा आयोगों के सदस्यों को कदाचार के कारण उन के पद से हटा सकता है। इस सम्बन्ध में इसी सिद्धान्त का अनुसरण

किया गया है जो गवर्नमेंट आफ इण्डिया ऐक्ट १९३५ में हाई कोर्ट और फेडरल कोर्ट के जजों को हटाने के लिये रखा गया था। इसके अनुसार, संविधान में उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुसन्धान का उपबन्ध किया गया है और राष्ट्रपति उसके ही आधार पर कार्यवाही करेगा।

अधिक सेवा की पात्रता

सदस्यों की ईमानदारी और निष्पक्षता को सुनिश्चित करने के लिये यह नियम रखा गया है कि उन्हें किसी अन्य आयोग के सभापतित्व या सदस्यता के अतिरिक्त सरकार के आधीन आगे किसी भी सेवा या नौकरी का पात्र न माना जाय। इन आयोगों (कमीशनों) की स्वतन्त्रता के सुनिश्चय के लिये ही यह भी व्यवस्था है कि उनके वेतनो, भत्तो, निवृत्ति, वेतनों या पेन्शनों आदि का समस्त व्यय संचित निधि पर भारित या चार्ज किया जाय। दूसरे शब्दों में, लोकसेवा आयोगों के सदस्यों की उपलब्धियों पर संसद अथवा विधान-मण्डलों के सदस्य मत नहीं दे सकेंगे, और उनकी पदावधि राजनीतिक दलों के उतार चढ़ाव, कृपा या अवकृपा से अप्रभावित रहेगी।

राष्ट्रपति, राज्यपाल अथवा राजप्रमुख अपने अपने आयोगो के लिये जो विनियम बनायेंगे, वे उन के विधान-मण्डलों के सदनों के समक्ष उपस्थित कर दिये जायेंगे। लोकसेवा आयोगों की सिपारिशों में हस्तक्षेप का निवारण करने के लिये संविधान ने आदेश दिया है कि ये आयोग अपने कार्य का वार्षिक प्रतिवेदन या रिपोर्ट प्रशासनों के प्रमुखों के समक्ष उपस्थित किया करेंगे। और वे प्रमुख इस की एक एक प्रतिलिपि विधान-मण्डल के प्रत्येक सदन के समक्ष रख देंगे, जिस के साथ ही वे इस आशय का अभ्यावेदन भी रखेंगे कि किन मामलों में लोकसेवा आयोग का परामर्श क्यों नहीं माना गया। इस प्रकार आयोगों की सिपारिशों के विपरीत चलने

के लिये मन्त्री-परिषदों को उत्तरदायी . का आदर होने का सुनिश्चय रहेगा ।

भारत का नियन्त्रक

भारत का नियन्त्रक महालेखा प जनरल) संघ और राज्यों के वित्तों औ दृष्टि रखेगा । उस की नियुक्ति राष्ट्र स्वतन्त्र न्यायाधीश की होगी । वह धन प्रतिवेदनों या रिपोर्टों की परीक्षा करेगा मण्डल ने जिन धनों को पास किया है, वे संघ और राज्य के हिसाबों के विषय में उ विधान-मण्डलों में पेश किये जाने से पू उपस्थित की जायेंगी ।

उपसंहार

भारतीय संविधान एक लोकतांत्रिक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र की कल्पना करता है। इस ने भारत को वर्तमान लोकतन्त्रों में सब से बड़ा बना दिया है, और इस ने इतने अधिक व्यक्तियों को मताधिकारी बना दिया है जिन के सम्बन्ध में यह अनुमान है कि वे संसार की समस्त जनसंख्या का बारहवां भाग हैं। नये संविधान ने सहकारिता के उदात्त विचार पर आधारित राष्ट्र को मताधिकार और आर्थिक लोकतन्त्र के सम्मिश्रण को क्रियान्वित करने का यत्न किया है। इसमें मानव के अधिकारों की जैसी विस्तृत घोषणा की गई है, वैसी अब तक किसी राष्ट्र ने नहीं की। भारत के इतिहास में प्रथम बार देश की भौगोलिक एकता हुई है, और इस के विविध सूत्र एक राजनीतिक वस्त्र में बुने गये हैं। भारत अब एक राष्ट्र बन गया है।

नवीन संविधान लचकदार और व्यवहार्य है। इस की रचना इस

के लिये मन्त्री-परिषदों को उत्तरदायी होना पड़ेगा। इस प्रकार योग्यता का आदर होने का सुनिश्चय रहेगा।

भारत का नियन्त्रक महालेखा परीक्षक

भारत का नियन्त्रक महालेखा परीक्षक (कण्ट्रोलर ऐण्ड आडिटर जनरल) संघ और राज्यों के वित्तों और हिसाबों पर तीक्ष्ण तथा चेतन दृष्टि रखेगा। उस की नियुक्ति राष्ट्रपति करेगा, और उसकी स्थिति स्वतन्त्र न्यायाधीश की होगी। वह धन के दुरुपयोग के सब हिसाबों और प्रतिवेदनों या रिपोर्टों की परीक्षा करेगा। वह यह भी देखेगा कि विधान-मण्डल ने जिन धनों को पास किया है, वे ठीक मदों में ही व्यय किये जायें। संघ और राज्य के हिसाबों के विषय में उस के वार्षिक प्रतिवेदन या रिपोर्ट विधान-मण्डलों में पेश किये जाने से पूर्व प्रशासनों के प्रमुखों की सेवा में उपस्थित की जायेंगी।

भारतीय संविधान एक लोकतांत्रिक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र की कल्पना करता है। इस ने भारत को वर्तमान लोकतन्त्रों में सब से बड़ा बना दिया है, और इस ने इतने अधिक व्यक्तियों को मताधिकारी बना दिया है जिन के सम्बन्ध में यह अनुमान है कि वे संसार की समस्त जनसंख्या का बारहवां भाग हैं। नये संविधान ने सहकारिता के उदात्त विचार पर आधारित राष्ट्र को मताधिकार और आर्थिक लोकतन्त्र के सम्मिश्रण को क्रियान्वित करने का यत्न किया है। इसमें मानव के अधिकारों की जैसी विस्तृत घोषणा की गई है, वैसी अब तक किसी राष्ट्र ने नहीं की। भारत के इतिहास में प्रथम बार देश की भौगोलिक एकता हुई है, और इस के विविध सूत्र एक राजनीतिक वस्त्र में बुने गये है। भारत अब एक राष्ट्र बन गया है।

नवीन संविधान लचकदार और व्यवहार्य है। इस की रचना इस

प्रकार की गई है कि यह भावी सब सम्भावनाओं का सामना कर सके। इस का संघीय ढांचा युद्ध सरीखी आपात अवस्था में एक केन्द्रीय संगठन की भांति काम दे सकता है। इस का आधार यह सुसम्मत सिद्धान्त है कि आपात अवस्था में नागरिकों की अवशिष्ट निष्ठा केन्द्र के प्रति रहनी चाहिये। एकमात्र इसी प्रकार देश का साधारण हित सध सकता है। कभी कभी ऐसी आलोचना की जाती है कि केन्द्र को अतिक्रमण की शक्तियां प्रदान करके एककों या एकाइयों के साथ न्याय नहीं किया गया। परन्तु यह विचार भ्रान्त है। संघ का आधार ही केन्द्र और एककों में प्राधिकारों का बटवारा होता है। भारतीय संविधान में, आपात अवस्थाओं को छोड़ कर संघ की यह विशेषता अव्याहत रहेगी, और न्यायालय भी इसमें मौलिक परिवर्तन नहीं कर सकेंगे। संसद् भी इसे स्थायी रूपेण नहीं बदल सकती। जिस पर केन्द्र को अतिक्रमण की जो शक्तियां दी गई हैं, वे संविधान के साधारण पहलू नहीं हैं। उन्हें स्पष्ट रूपेण आपात के लिये ही सीमित कर दिया गया है। ये केन्द्र के उत्तरदायित्व की गुरुता की सूचक हैं।

संविधान तो एक निरा यन्त्रमात्र है। डा० अम्बेडकर ने कहा था :— "संविधान कितना ही अच्छा क्यों न हो, वह बुरा अवश्य बन जाता है क्योंकि जिन्हें इसे कार्यान्वित करने का काम सौंपा जाता है, वे बुरे निकल जाते हैं।" किसी भी संविधान की सफलता राष्ट्र के चरित्र पर, इसे कार्यान्वित करने की भावना पर और ऐसा करनेवाले लोगों की नेकनीयती पर निर्भर करती है। परन्तु अन्ततोगत्वा हमारे शासन का रूप और भलाई बुराई, हमारी विधियों या क़ानूनों, सिद्धान्तों, अभिसमयों या परम्पराओं और उदाहरणों पर निर्भर करेंगे बल्कि इनसे भी बढ़ कर हमारे राजनीतिक दलों की न्यायप्रियता, सिद्धान्तपरता और लोकहित भावना पर जनता के प्रभावी तथा स्वेच्छया सहयोग पर निर्भर रहेगा।

संविधान तो [illegible] भारतीय स्वतन्त्रता का [illegible]

है। परन्तु कोई संविधान आप से आप किसी राष्ट्र की स्वतन्त्रता का रक्षक दुर्ग नही बन सकता। डा० अम्बेडकर ने बतलाया है: "यदि पार्टिया अपने मतवादों को देश से ऊंचा स्थान देंगी, तो हमारी स्वतन्त्रता पुनः संकटापन्न हो जायेगी, और शायद सदा के लिये नष्ट हो जाये। हमें दृढ़ता से इस सम्भावना से बच कर चलना चाहिये। हमें अपने रक्त के अन्तिम बिन्दु से अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने पर कटिबद्ध होना चाहिये।"

प्रकार की गई है कि यह भावी सब सम्भावनाओं का सामना कर सके। इस का संघीय ढांचा युद्ध सरीखी आपात अवस्था में एक केन्द्रीय संगठन की भांति काम दे सकता है। इस का आधार यह सुसम्मत सिद्धान्त है कि आपात अवस्था में नागरिकों की अवशिष्ट निष्ठा केन्द्र के प्रति रहनी चाहिये। एकमात्र इसी प्रकार देश का साधारण हित सध सकता है। कभी कभी ऐसी आलोचना की जाती है कि केन्द्र को अतिक्रमण की शक्तियां प्रदान करके एककों या एकाइयों के साथ न्याय नहीं किया गया। परन्तु यह विचार भ्रान्त है। संघ का आधार ही केन्द्र और एककों में प्राधिकारों का बटवारा होता है। भारतीय संविधान में, आपात अवस्थाओं को छोड़ कर संघ की यह विशेषता अव्याहत रहेगी, और न्यायालय भी इसमें मौलिक परिवर्तन नहीं कर सकेंगे। संसद् भी इसे स्थायी रूपेण नहीं बदल सकती। तिस पर केन्द्र को अतिक्रमण की जो शक्तियां दी गई हैं, वे संविधान के साधारण पहलू नहीं हैं। उन्हें स्पष्ट रूपेण आपात के लिये ही सीमित कर दिया गया है। वे केन्द्र के उत्तरदायित्व की गुरुता की सूचक हैं।

संविधान तो एक निरा यन्त्रमात्र है। डा० अम्बेडकर ने कहा था :— "संविधान कितना ही अच्छा क्यों न हो, यह बुरा अवश्य बन जाता है क्योंकि जिन्हें इसे कार्यान्वित करने का काम सौंपा जाता है, वे बुरे निकल जाते हैं।" किसी भी संविधान की सफलता राष्ट्र के चरित्र पर, इसे कार्यान्वित करने की भावना पर और ऐसा करनेवाले लोगों की नेकनीयती पर निर्भर करती है। परन्तु अन्ततोगत्वा हमारे शासन का रूप और भलाई बुराई, हमारी विधियों या कानूनों, सिद्धान्तों, अभिसमयों या परम्पराओं और उदाहरणों पर निर्भर रहेगी बल्कि इनसे भी बढ़ कर हमारे राजनीतिक दलों की व्यावहारिकता, सिद्धान्तपरता और संगठित भावना पर, जनता के धैर्य तथा निःस्पृह सहयोग पर निर्भर होगा।

संविधान को [illegible]

है। परन्तु कोई संविधान आप से आप किसी राष्ट्र की स्वतन्त्रता का रक्षक दुर्ग नहीं बन सकता। डा० अम्बेडकर ने बतलाया है: "यदि पार्टियां अपने मतवादों को देश से ऊंचा स्थान देंगी, तो हमारी स्वतन्त्रता पुनः संकटापन्न हो जायेगी, और शायद सदा के लिये नष्ट हो जाये। हमें दृढ़ता से इस सम्भावना से बच कर चलना चाहिये। हमें अपने रक्त के अन्तिम बिन्दु से अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने पर कटिबद्ध होना चाहिये।"

परिशिष्ट

१. राज्यों के नाम

भाग क

१. आसाम
२. उड़ीसा
३. पंजाब
४. पश्चिमी बंगाल
५. बिहार
६. मद्रास
७. मध्यप्रदेश
८. मुम्बई
९. उत्तर प्रदेश

भाग ख

१. जम्मू और काश्मीर
२. तिरुवांकुर कोचीन
३. पटियाला तथा पूर्वी पंजाब राज्य संघ
४. मध्यभारत
५. मैसोर
६. राजस्थान

भाग ग

१. अजमेर
२. कच्छ
३. कोडगू (कुर्ग)
४. त्रिपुरा
५. दिल्ली
६. बिलासपुर
७. भोपाल
८. मनीपुर
९. विन्ध्य प्रदेश
१०. हिमाचल प्रदेश

२. भारत की राज्याधीन नौकरियां

अखिल भारतीय नौकरियां

अपनी लोकसेवायें संगठित करने के अधिकार से राज्यों को वंचित किये बिना, संविधान में कुछ अखिल भारतीय सेवाओं का उपबन्ध है, जिनमें भरती अखिल भारतीय आधार पर होगी, और जिनके सदस्य संघ में महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किये जायेंगे। भारत प्रशासन सेवा और भारत आरक्षी (पुलिस) सेवा इनके उदाहरण हैं। यदि इस प्रकार की और भी सेवाओं को राष्ट्र हित के लिये आवश्यक समझा जाय, तो उनका सृजन राज्य परिषद के उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत द्वारा समर्थित निर्णय द्वारा हो सकता है।

नियम और विनियम

संविधान के उपबन्धों के आधीन, लोक सेवाओं में नियुक्त व्यक्तियों की भरती और उनकी सेवा सम्बन्धी शर्तों के विधि या कानून द्वारा विनियमन का अधिकार सम्बद्ध विधान-मण्डलों में निहित है। जब तक तद्विषयक विधियां नहीं बनतीं, तब तक आवश्यक नियमों का निर्माण सम्बद्ध शासनों के प्रमुख अथवा उन द्वारा निर्देशित व्यक्ति करेंगे।

पदावधि

भारत के सब लोकसेवक सैनिक और असैनिक दोनों अपने पदों पर सम्बद्ध शासनों के प्रमुखों के प्रसाद पर्यन्त (जब तक वे चाहें तब तक) रहेंगे। [illegible] के पद इस नियम के [illegible] यदि [illegible] पदों के

उत्सादन या समाप्ति के कारण अथवा कदाचार के अतिरिक्त अन्य किसी कारण इन पदों पर नियुक्त व्यक्तियों से अपने पद रिक्त कर देने की अपेक्षा की जायगी, तो उन्हें प्रतिकर या मुआवज़ा दिया जा सकेगा ।

पदच्युति अथवा पृथक् किये जाने की अवस्था में संविधान ने उससे प्रभावित व्यक्तियों के लिये दो प्रकार के परित्राण या संरक्षण का उपबन्ध किया है, अर्थात् :

१. किसी भी लोकसेवक को जिस प्राधिकारी ने नियुक्त किया था, उससे निचला कोई प्राधिकारी, उसे पृथक् या पदच्युत नहीं कर सकेगा ;

२. कोई भी पदच्युति अथवा पद से पृथक्करण, पंक्तिच्युति पदावनति नहीं की जायगी जब तक कि उससे प्रभावित लोकसेवक को प्रस्थापित या प्रस्तावित कार्रवाई के विरुद्ध कारण दर्शाने का उपयुक्त अवसर नहीं दे दिया जायेगा ।

परन्तु ये परित्राण निम्न अवस्थाओं में लागू नहीं होंगे :

क. जब कोई व्यक्ति ऐसे आचरण के कारण पदच्युत या पंक्तिच्युत किया जाय जिस के लिये आपराधिक दोषारोप पर वह सिद्ध-दोष हुआ है ;

ख. जहां किसी व्यक्ति को पदच्युत करने या पद से पृथक करने या पंक्तिच्युत करने की शक्ति रखनेवाले किसी प्राधिकारी का समाधान हो जाता है कि किसी कारण से, जो उस प्राधिकारी द्वारा लेखबद्ध किया जायेगा, यह युक्तियुक्त रूप में व्यवहार्य नहीं है कि उस व्यक्ति को कारण दिखाने का अवसर दिया जाये ;

२. भारत की राज्याधीन नौकरियां

अखिल भारतीय नौकरियां

अपनी लोकसेवायें संगठित करने के अधिकार से राज्यों को वंचित किये बिना, संविधान में कुछ अखिल भारतीय सेवाओं का उपबन्ध है, जिनमें भर्ती अखिल भारतीय आधार पर होगी और जिनके सदस्य संघ में महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किये जायेंगे। भारत प्रशासन सेवा और भारत आरक्षी (पुलिस) सेवा इनके उदाहरण हैं। यदि इस प्रकार की और भी सेवाओं को राष्ट्र हित के लिये आवश्यक समझा जाय, तो उनका सृजन राज्य परिषद के उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत द्वारा समर्थित निर्णय द्वारा हो सकता है।

नियम और विनियम

संविधान के उपबन्धों के आधीन, लोक सेवाओं में नियुक्त व्यक्तियों की भर्ती और उनकी सेवा सम्बन्धी शर्तों के विधि या कानून द्वारा विनियमन का प्राधिकार सम्बद्ध विधान-मण्डलों में निहित है। जब तक एतद्विषयक विधियां नहीं बनतीं, तब तक आवश्यक नियमों का निर्माण सम्बद्ध शासनों के प्रमुख अथवा उन द्वारा निर्देशित व्यक्ति करेंगे।

पदावधि

भारत के सब लोकसेवक केन्द्रिक और राज्यिक दोनों अपने पदों पर सम्बद्ध शासनों के प्रमुखों के प्रसाद पर्यन्त (जब तक वे चाहें तब तक) रहेंगे। संविदा या ठेके के पद इस नियम के अपवाद हैं, यदि उक्त पदों के

३. संघ की राज भाषा

अनुच्छेद

३४३ (१) संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी

संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग होनेवाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा।

(२) खंड (१) में किसी बात के होते हुय भी इस संविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्ष की कालावधि के लिये संघ के उन सब प्रयोजनों के लिय अंग्रेज़ी भाषा प्रयोग की जाती रहेगी, जिनके लिये ऐसे प्रारम्भ के ठीक पहले वह प्रयोग की जाती थी।

परन्तु राष्ट्रपति उक्तकालावधि में, आदेश द्वारा संघ के राजकीय प्रयोजनों में से किसी के लिये अंग्रेज़ी भाषा के साथ साथ हिन्दी भाषा का तथा भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप के साथ साथ देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा।

(३) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुये भी संसद् उक्त पन्द्रह साल की कालावधि के पश्चात् विधि द्वारा

(क) अंग्रेज़ी भाषा का, अथवा

(ख) अंकों के देवनागरी रूप का,

ऐसे प्रयोजनों के लिये उपबन्धित कर सकेगी, जो ऐसी विधि या क़ानून में उल्लिखित हों।

ग. जहां सम्बद्ध शासन के प्रमुख का समाधान हो जाय कि राज्य की सुरक्षा के हित में यह इष्टकर या वांछनीय नहीं है कि उस व्यक्ति को ऐसा अवसर दिया जाये ।

सेक्रेटरी आफ स्टेट की सेवाओं को कुछ विशेषाधिकार की गारन्टी

संविधान में एक विशेष उपबन्ध है जो भूतपूर्व सेक्रेटरी आफ स्टैट की सेवाओं को दी हुई कुछ साविधानिक प्रत्याभूतियों या गारंटियों के जारी रहने का निश्चय कराता है। यह उपबन्ध इण्डियन सिविल सर्विस, इण्डियन मेडिकल सर्विस, इण्डियन पुलिस सर्विस आदि के लिये है, और उनके सदस्यों को प्रत्याभूति देती है कि परिवर्तित परिस्थितियों में जहां तक सम्भव होगा, वहां तक उनकी सेवा के पारिश्रमिक, छुट्टी, निवृत्ति वेतन (पेन्शन) आदि की पुरानी शर्तें ही संविधान का प्रारम्भ करने के पश्चात् भी लागू रहेंगी । यह निश्चय उस प्रतिज्ञा की पूर्ति के लिये कराया गया है जो राष्ट्र के नेताओं ने भारतीय संघ की शक्ति हस्तान्तरित करते समय की थी ।

हिन्दी भाषा के विकास के लिये निदेश

३५१. हिन्दी भाषा के प्रसार की वृद्धि करना, उसका विकास करना ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, तथा उसकी आत्मीयता में हस्तक्षेप किये विना हिन्दुस्तानी और अष्ट अनुसूची में उल्लिखित अन्य भाषाओं के रूप, शैली और पदावली को आत्मसात करते हुये तथा जहां आवश्यक या वांछनीय हो, वहां उसके शब्द भण्डार के लिये मुख्यत: संस्कृत से तथा गौणत: वैसी उल्लिखित भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुये उसकी समृद्धि सुनिश्चित् करना संघ का कर्त्तव्य होगा। *

---

*अनुच्छेद ३४३ और ३५१ के अधिकृत अनुवाद को ही यहां उद्धृत किया है ।

४. भारत की महत्वपूर्ण भाषायें

१. असमिया
२. उड़िया
३. उर्दू
४. कन्नड़
५. काश्मीरी
६. गुजराती
७. तामिल
८. तेलगू
९. पंजाबी
१०. बंगला
११. मराठी
१२. मलयालम
१३. संस्कृत
१४. हिन्दी

सहायक पुस्तक सूची

१. गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया ऐक्ट, १९३५ [(इण्डियन प्रोविजनल कांस्टिट्यूशन आर्डर) १९४७ द्वारा अनुकूलित]

२. हिज मैजस्टी की (ब्रिटिश) सरकार के ६ दिसम्बर १९४६, २० फरवरी १९४७ और ३ जून १९४७ के वक्तव्यों से सम्बद्ध लेख्य या कागजात। भारत की संविधानपरिषद, १९४७।

३. इण्डियन इण्डिपेण्डेन्स ऐक्ट, १९४७।

४. भारत की स्वतन्त्रता का अधिकार पत्र भारतीय विधानपरिषद, १९४७।

५. समितियों के प्रतिवेदन (प्रथम माला) १९४७।

६. समितियों के प्रतिवेदन (द्वितीय माला) १९४८।

७. भाषावार प्रान्त आयोग या कमीशन का प्रतिवेदन। भारतीय विधानपरिषद, १९४८।

८. उत्तर पूर्वी सीमा आसाम जन जातीय और बहिष्कृत क्षेत्र उपसमिति, जिल्द प्रथम (प्रतिवेदन)। भारतीय संविधानपरिषद।

९. बहिष्कृत और अंशतः बहिष्कृत क्षेत्र आसाम के अतिरिक्त उपसमिति, प्रतिवेदन, जिल्द द्वितीय गवाहियां, भाग १।

१०. सांविधानिक पूर्व घटनायें प्रथम माला । भारतीय संविधान परिषद, १९४६ ।

११. सांविधानिक पूर्व घटनायें द्वितीय माला । भारतीय संविधान परिषद, १९४६ ।

१२. सांविधानिक पूर्व घटनायें तृतीय माला । भारतीय संविधान परिषद, १९४७ ।

१३. अल्पसंख्यक उपसमिति का प्रतिवेदन, १९४७ ।

१४. भारतीय रियासत वित्त अनुसन्धान समिति का प्रतिवेदन, १९४७ ।

१५. स्टैटिस्टिकल हैण्डबुक, नं० १, भारतीय संविधान-परिषद ।

१६. स्टैटिस्टिकल हैण्डबुक, नं० २, भारतीय संविधान-परिषद ।

१७. संविधान-परिषद के विवाद।

१८. ड्रैफ्टिंग कमिटी की रिपोर्ट, फरवरी २१, १९४८ ।

१९. ड्रैफ्टिंग कमिटी की रिपोर्ट, ३ नवम्बर, १९४९ ।

२०. भारतीय संविधान ।

नया चीन

लेखक- श्री हुकमराज मेहता
भूमिका लेखक- श्री मातादीन भगेरिया,
सम्पादक, "नवभारत टाइम्स" दैनिक
(दिल्ली, कलकत्ता बम्बई)

प्रकाशक
राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर (राजस्थान)